ISSN-0971-8397

योजना

मई 2019 | विकास को समर्पित मासिक | ₹ 22

सतत ऊर्जा को बढ़ावा

सतत विकास के लिए अहम है ऊर्जा दक्षता

अभय बाकरे

भारत में अक्षय ऊर्जा का वित्त पोषण

पी सी मैथानी

भू-ताप और समुद्री ऊर्जा तकनीक

अनुभव उप्पल

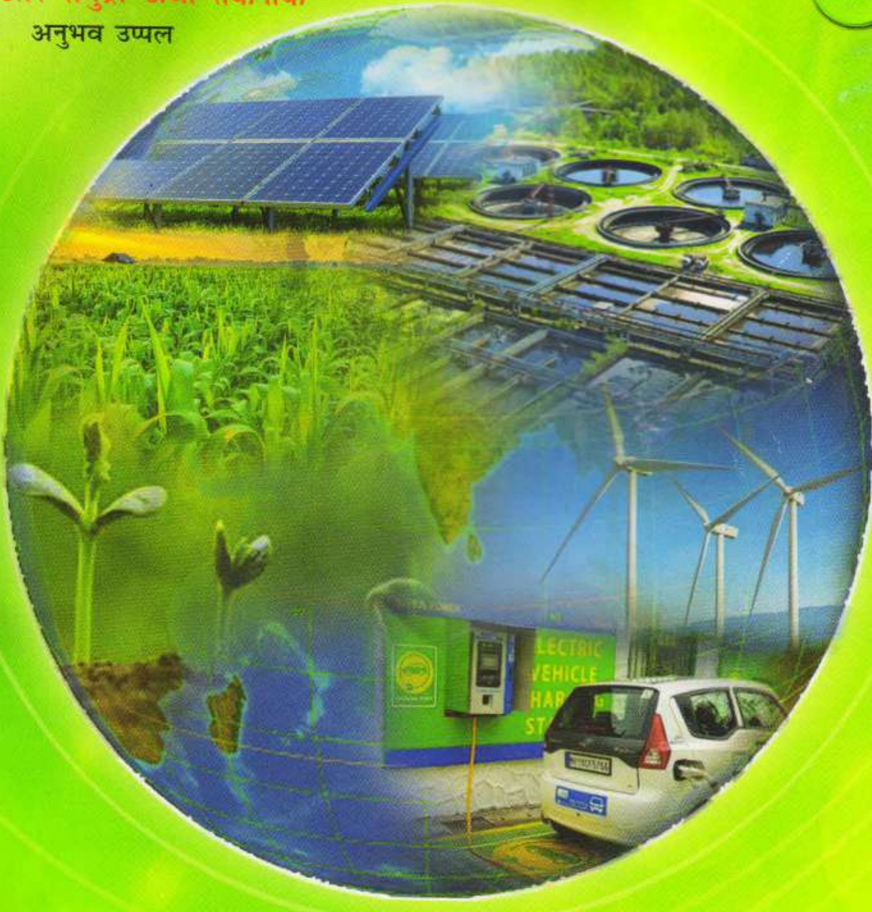

विशेष आलेख

सौर संभावनाओं को हासिल करने के उपाय

सुमंत सिन्हा

फोकस

सतत ऊर्जा के पर्यावरण अनुकूल विकल्प

एन भद्रन नायर

योजना

वर्ष : 63
अंक : 05

मई 2019
वैशाख-ज्येष्ठ, शक संवत् 1941

मूल्य : ₹ 22
पृष्ठ : 60

वेबसाइट www.yojana.gov.in

प्रधान संपादक : शमीमा सिद्दीकी

वरिष्ठ संपादक : कुलश्रेष्ठ कमल

संपादक : डॉ. ममता रानी

संपादकीय कार्यालय

648, सूचना भवन, सीजीओ परिसर,
लोधी रोड, नयी दिल्ली-110 003
दूरभाष (प्रधान संपादक): 24362971

संयुक्त निदेशक (उत्पादन): वी के मीणा

आवरण: गजानन पी धोपे

योजना का लक्ष्य देश के आर्थिक विकास से संबंधित मुद्दों का सरकारी नीतियों के व्यापक संदर्भ में गहराई से विश्लेषण कर इन पर विमर्श के लिए एक जीवंत मंच उपलब्ध कराना है।

योजना में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। जरूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो।

योजना में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए योजना उत्तरदायी नहीं हैं।

योजना में प्रकाशित आलेखों में प्रयुक्त मानचित्र व प्रतीक आधिकारिक नहीं है, बल्कि सांकेतिक हैं। ये मानचित्र या प्रतीक किसी भी देश का आधिकारिक प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं।

योजना मंगवाने की दरें

एक वर्ष: ₹ 230, दो वर्ष: ₹ 430, तीन वर्ष: ₹ 610

पत्रिका न मिलने की शिकायत के लिए pdjucir@gmail.com पर ईमेल करें, योजना की सदस्यता लेने या पुराने अंक मंगाने के लिए भी इसी ईमेल पर लिखें या संपर्क करें- दूरभाष: 011-24367453

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें–

संपादक (प्रसार एवं विज्ञापन)
प्रसार एवं विज्ञापन अनुभाग
प्रकाशन विभाग,
कमरा सं. 56, भूतल, सूचना भवन,
सीजीओ परिसर, लोधी रोड,
नयी दिल्ली-110003

इस अंक में

सतत विकास के लिए अहम है ऊर्जा दक्षता
अभय बाकरे 7

फोकस

सतत ऊर्जा के पर्यावरण अनुकूल विकल्प
एन भद्रन नायर 11

भारत में अक्षय ऊर्जा का वित्त पोषण
पी सी मैथानी 15

क्या आप जानते हैं?

ई-कचरा प्रबंधन 19

विशेष आलेख

सौर संभावनाओं को हासिल करने के उपाय
सुमंत सिन्हा 20

भू-ताप और समुद्री ऊर्जा तकनीक
अनुभव उप्पल 24

बायोगैस - एक अनकही कहानी
ऋचा मिश्रा 30

पर्यावरण के लिए गाड़ियों का हरित अभियान
वेंकटेश द्विवेदी 34

वन और जल-संरक्षण तथा चिरस्थायी विकास
सविता 39

प्रकृति है अनमोल
सीमा कुलश्रेष्ठ 44

विकास और ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती का ताल-मेल
रितु माथुर, गरिमा वत्स, स्वप्निल शेखर.... 46

जलवायु परिवर्तन : चुनौतियां और अवसर
उर्मि गोस्वामी 50

पुस्तक चर्चा 56

प्रकाशन विभाग द्वारा जलियांवाला बाग नरसंहार के शताब्दी वर्ष का आयोजन.......58

प्रकाशन विभाग के विक्रय केंद्र			
नयी दिल्ली	पुस्तक दीर्घा, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड	110003	011-24367260
दिल्ली	हाल सं. 196, पुराना सचिवालय	110054	011-23890205
नवी मुंबई	701, सी- विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर	400614	022-27570686
कोलकाता	8, एसप्लानेड ईस्ट	700069	033-22488030
चेन्नई	'ए विंग, राजाजी भवन, बसंत नगर	600090	044-24917673
तिरुअनंतपुरम	प्रेस रोड, नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट	695001	0471-2330650
हैदराबाद	कमरा सं 204, दूसरा तल, सीजीओ टावर, कवादिगुड़ा सिकंदराबाद	500080	040-27535383
बैंगलुरु	फर्स्ट फ्लोर, 'एफ विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला	560034	080-25537244
पटना	बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ	800004	0612-2683407
लखनऊ	हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, क्षेत्र-एच, अलीगंज	226024	0522-2325455
अहमदाबाद	द्वितीय तल, अलखनंदा हॉल, भद्रा, मदर टेरेसा रोड	380052	079-26588669

www.publicationsdivision.nic.in
@DPD_India

हिंदी, असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, तमिल, तेलुगु, मराठी, ओडिया, पंजाबी तथा उर्दू में एक साथ प्रकाशित

आपकी राय

योजना और विकास एक-दूसरे के पूरक

'विकास' शब्द स्वयं में ही एक ऐसा शब्द है जिसके बिना संसार पूरा नहीं हो सकता! ये संसार आदि से अनादि तक सदैव विकास के पथ पर चलता ही रहेगा चाहे वो विकास किसी भी दिशा में हो जिसमें ये पत्रिका 'योजना' अपना कर्तव्य बड़ी ही सत्यता से निभा रही है। 'विकास' को समर्पित मार्च 2019 का अंक और भी ज्यादा महत्वपूर्ण बन जाता है क्योंकि मेरा ऐसा मानना है कि 'विकास' और 'योजना' एक दूसरे के पूरक हैं!

मैं एक पाठक के रूप में आप सभी महानुभावों को बधाई देता हूं और शुभकामनाएं भी देता हूं कि इसी प्रकार से आप जनमानस को समर्पित इस पत्रिका को प्रकाशित करते रहें।

– बशीरत अली सिद्दीकी
तहसील नानपारा, ज़िला बहराइच (उ.प्र.)
Email: ali1989lko@gmail.com

अंतरिम बजट का समेकित विश्लेषण

योजना के मार्च अंक के संपादकीय में विकास के विभिन्न पहलुओं के बारे में बताते हुए जनांकिक लाभांश को देश की ताकत बताया गया है। साथ ही, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के कथन के साथ संपादकीय का समापन गूढ़ विषय को समझाने के लिए सटीक रहा।

श्री शिशिर सिन्हा जी ने बजट के आयामों को अवलोकित करते हुए समेकित विश्लेषण किया है, साथ ही अन्य अच्छी जानकारी भी दी है। जल्द ही आयकर विभाग अपने सभी रिटर्न्स का सत्यापन एवं निपटारा इलेक्ट्रॉनिक विधि से कर सकेगा।

भारत निरंतर विकास के पथ पर अग्रसर है जिससे हम एक प्रबल श्रेष्ठ और सशक्त भारत बनने के गौरव को प्राप्त करने में सफल होंगे।

– माधवेन्द्र मिश्रा
रायबरेली, उत्तर प्रदेश

नागरिकों के चहुंमुखी विकास की अवधारणा

योजना के मार्च, 2019 अंक से विकास के विभिन्न आयामों की जानकारी मिली। विकास को समर्पित योजना पत्रिका का अध्ययन मैं 2009 से निरंतर कर रहा हूं। इस पत्रिका ने मुझे विश्लेषण करने के साथ-साथ अपने विचारों को प्रस्तुत करना सिखाया है। कोई भी राष्ट्र विकसित तभी बन सकता हैं ,जब समाज के अंतिम व्यक्ति तक विकास की रोशनी पहुंचे अर्थात समावेशी विकास हो। इस विकास प्रक्रिया के अंतर्गत विकास की पहुंच समाज के प्रत्येक वर्ग तक होती हैं। इसके द्वारा नागरिकों को सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक रूप से सशक्त किया जाता हैं तथा उन्हें आत्मनिर्भर बनाने पर बल दिया जाता हैं। विकास की यह अवधारणा नागरिकों के चहुंमुखी विकास से संबंधित हैं।

समावेशी विकास प्रक्रिया तभी संभव हैं, जब अर्थव्यवस्था में होने वाले रिसाव को रोका जाए क्योंकि इससे लाभार्थी को सरकारी योजनाओं का सम्पूर्ण लाभ नहीं मिल पाता है।

– अमित कुमार 'विश्वास'
हाजीपुर, वैशाली, बिहार

कृपया ध्यान दें

पत्रिका न मिलने की शिकायत के लिए pdjucir@gmail.com पर ईमेल करें, योजना मंगवाने या पुराने अंक प्राप्त करने तथा संबंधित जानकारी के लिए भी इसी ईमेल पर लिखें या संपर्क करें-
दूरभाष: 011-24367453

योजना से विश्लेषणात्मक क्षमता का विकास

मैं पिछले एक वर्ष से योजना पढ़ रही हूं जिसका प्रभाव मेरी लेखन शैली पर पढ़ने के साथ-साथ विश्लेषणात्मक क्षमता का भी विकास हुआ है। आपके इस प्रयास के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

गांधी जी का मानना था कि यदि हम अपने भारत को सुखी एवं समृद्ध बनाना चाहते हैं तो इसके लिए हमें सर्व प्रथम लघु, एवं कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देना होगा तब जाकर हम भारत देश की कल्पना को साकार रूप दे सकेंगे। अर्थात जब भारत का अधिकांश तबका गरीब एवं कृषि गतिविधियों में संलिप्त हैं साथ ही इतनी बड़ी जनसंख्या वाला देश है ऐसे में सभी को रोज़गार उपलब्ध कराना खास तौर पर अनौपचारिक क्षेत्र को किसी चुनौती से कम प्रतीत नहीं होता इसलिए भारत में हस्तशिल्प एवं वस्त्र उद्योग को बढ़ावा देना होगा क्योंकि यह क्षेत्र बड़ी संख्या में रोज़गार देने की क्षमता रखता है साथ ही महिलाओं के लिए भी इस क्षेत्र में भरपूर अवसर मौजूद है। हाल ही में रिलीज़ हुई फिल्म सुई धागा के माध्यम से वस्त्र उद्योग के बारे में प्रचार प्रसार किया गया है जो कही न कही इस उद्योग की प्रगतिशीलता को प्रदर्शित करता है साथ ही यह भी प्रदर्शित किया गया है कि कोई सूक्ष्म उद्योग भी बड़े उद्योग में परिवर्तित हो सकता है यदि पूरी लगन एवं नवाचारों के साथ काम किया जाए।

– पल्लवी आर्य
उत्तर प्रदेश (संभल)

संपादकीय

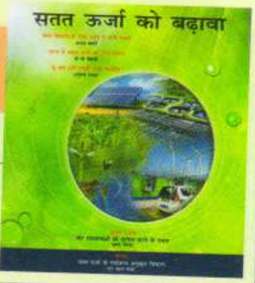

भविष्य की ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति

सतत और अक्षय ऊर्जा के जो भी साधन हैं, वे दरअसल बेहद अहम सामरिक राष्ट्रीय संसाधन हैं। मौजूदा समय की ज़्यादातर सरकारों के लिए पर्यावरण के अनुकूल विकास कार्यक्रम तैयार करना बेहद चुनौतीपूर्ण कार्य है। ऊर्जा संबंधी कार्यक्रमों के लिए योजना तैयार करते वक्त अक्षय ऊर्जा के संसाधनों पर प्रमुखता से गौर करना जरूरी है और इसलिए देश की ऊर्जा जरूरतों को पूरा करना किसी भी सरकार की कार्यसूची में प्रमुख है। अक्षय ऊर्जा से जुड़े संसाधन पर्यावरण की सुरक्षा, निवेश को बढ़ावा देने और पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के अलावा देश के सतत विकास अभियान में भी योगदान करते हैं।

ज़्यादातर अन्य देशों की तरह भारत भी अपनी ऊर्जा की जरूरतों के लिए बड़े पैमाने पर जीवाश्म ईंधन पर निर्भर है। ऊर्जा का दूसरा सबसे बड़ा जरिया कोयला है। इसे आमतौर पर स्वीकार किया जा चुका है कि जीवाश्म ईंधन उत्सर्जित हो जाता है और इनकी भरपाई नहीं हो सकती। साथ ही, ताप संयंत्र काफी प्रदूषण फैलाते हैं। हालांकि, ऊर्जा की जरूरत काफी तेजी से बढ़ रही है। चाहे औद्योगिक ऊर्जा की बात हो या घरेलू ऊर्जा या फिर गाड़ियों के लिए ऊर्जा का मामला, सभी स्तरों पर आपूर्ति के मुकाबले मांग ज़्यादा है। अतः मौजूदा वक्त की जरूरत ऐसी ऊर्जा की आपूर्ति को बढ़ाना है, जिसकी भरपाई हो सके और जो पर्यावरण को भी नुकसान नहीं पहुंचाती हो।

इस सिलसिले में भारत का राष्ट्रीय स्तर पर संभावित निर्धारित योगदान से जुड़ा लक्ष्य स्वच्छ ऊर्जा को बढ़ावा (खासतौर पर अक्षय ऊर्जा), किफायती स्तर पर ऊर्जा की खपत तथा सुरक्षित, स्मार्ट और टिकाऊ हरित परिवहन नेटवर्क तैयार करने पर केंद्रित है। साथ ही, जंगल और पड़े पौधों के विस्तार के जरिये भारत कार्बन को कम करने की कोशिश कर रहा है।

सौर ऊर्जा, बायो-गैस, भू-तापीय ऊर्जा और समुद्री ऊर्जा आदि स्वच्छ ऊर्जा के कुछ संसाधन हैं, जो पर्यावरणीय प्रदूषण के बुरे असर को कम करने में मददगार हो सकते हैं। भारत में समुद्र से ऊर्जा प्राप्त करने का काम अभी शुरुआती दौर में है, जबकि भू-तापीय ऊर्जा अक्षय ऊर्जा तकनीक की दिशा में व्यावहारिक विकल्प जान पड़ता है। भू-तापीय ऊर्जा में विद्युत ऊर्जा उत्पादन और प्रत्यक्ष ऊष्मा के उपयोग के जरिये स्वच्छ ऊर्जा उपलब्ध कराने की संभावना है।

ऊर्जा के संसाधन के तौर पर बायो-गैस का विकल्प ग्रामीण भारत के लिए वरदान हो सकता है। बायो-गैस ऊर्जा न सिर्फ ग्रामीण इलाकों में ऊर्जा की हालत को बेहतर कर सकती है, बल्कि इससे अपशिष्ट का उपयोग भी सुनिश्चित होगा- कृषि संबंधी अपशिष्ट और डेयरी से जुड़ा अपशिष्ट, दोनों इसमें कारगर होंगे।

सौर और पवन जैसे ऊर्जा के बाकी प्रचलित संसाधनों का उपयोग देश के कुछ हिस्सों में हो रहा है। हालांकि, अक्षय ऊर्जा के लिए वित्त-पोषण बड़ा मुद्दा है। सस्ती ब्याज दर, दीर्घकालिक कर्ज गारंटी जैसी चीजें अक्षय ऊर्जा तैयार करने से जुड़े बड़े पूंजीगत खर्च के कुछ साधन हैं। संस्थागत वित्तीय सुविधा भी इस समस्या से निपटने का एक विकल्प है।

फिलहाल, भारत अपनी ऊर्जा जरूरतें पूरी करने के लिए बड़े पैमाने पर आयातित तेल और गैस पर निर्भर है। हालांकि, अक्षय ऊर्जा के साधनों के ज्यादा से ज्यादा उपयोग के लिए समेकित प्रयास जारी है, ताकि भारत जलवायु परिवर्तन पर पेरिस समझौते के मुताबिक किए गए अपने वादे को पूरा कर सके। ❑

सतत विकास के लिए अहम है ऊर्जा दक्षता

अभय बाकरे

भारत में व्यापक स्तर पर घरों का विद्युतीकरण हुआ है और जाहिर तौर पर ऊर्जा के लिए मांग में भी बढ़ोतरी हुई है। इसका एक प्रमुख कारण तेजी से बढ़ रही आबादी है। एक और वजह ऊर्जा संबंधी आर्थिक गतिविधियों में बढ़ोतरी है। चूंकि ऊर्जा के परंपरागत साधन कम हो रहे हैं और अक्षय ऊर्जा के साधन विकाशील दौर में हैं, लिहाजा सभी स्तरों पर ऊर्जा दक्षता में सुधार करना इस समस्या से निपटने का तात्कालिक समाधान है। ऊर्जा, पर्यावरण और सतत विकास के बीच सीधा संबंध है। सतत विकास चाहने वाले देश को आदर्श और जरूरी तौर पर ऊर्जा के उन संसाधनों का उपयोग करना चाहिए, जिसका पर्यावरण पर कम से कम बुरा असर होता है। ऊर्जा दक्षता में बढ़ोतरी के जरिये पर्यावरण संबंधी उत्सर्जन और उसके बुरे असर के मामले में सतत विकास की सीमा संबंधी चिंताओं से निपटा जा सकता है। सरकार ने राष्ट्रीय निर्धारित योगदान के जरिये उत्सर्जन तीव्रता को कम कर साल 2030 तक इसे 2005 के स्तर की तुलना में जीडीपी का 33-35 फीसदी तक कम करने का लक्ष्य तय किया है। हालांकि, इस लक्ष्य को हासिल करने के मकसद से खास तौर पर 3 क्षेत्रों में ऊर्जा दक्षता बढ़ाने के लिए समेकित प्रयास करने की जरूरत है-

- औद्योगिक क्षेत्र
- रिअल एस्टेट (भूमि-भवन)
- उपभोक्ता उपकरण

औद्योगिक क्षेत्र

औद्योगिक क्षेत्र अब भी सबसे ज्यादा ऊर्जा खपत करने वाला क्षेत्र है, जहां ऊर्जा संरक्षण की अहम भूमिका होगी। प्रमुख उद्योगों में किफायती स्तर पर ऊर्जा की खपत यानि ऊर्जा संरक्षण और तकनीकी बेहतरी के लिए काफी संभावनाएं हैं। ऊर्जा दक्षता ब्यूरो (बीईई) ऊर्जा दक्षता में सुधार के मकसद से राष्ट्रीय ऊर्जा दक्षता बढ़ोतरी

> उपभोक्ता उपकरण ऊर्जा की खपत से जुड़ा अहम क्षेत्र है। इसके दायरे में एसी, माइक्रोवेव, वॉशिंग मशीन आदि जैसे घरेलू इलेक्ट्रॉनिक उपकरण शामिल हैं। टिकाऊ उपभोक्ता सामग्री क्षेत्र में ऊर्जा की बचत संबंधी तकनीक को बढ़ावा देने के लिए कई तरह के कदम उठाए जा रहे हैं

लेखक ऊर्जा दक्षता ब्यूरो के महानिदेशक हैं। ईमेल: abhaybak@gmail.com

मिशन (एनएमईईई) के तहत पीएटी-परफॉर्म, एचीव एंड ट्रेड यानि (प्रदर्शन करें, हासिल करें और व्यापार करें) योजना लागू कर रहा है।

पीएटी

यह ऊर्जा केंद्रित उद्योगों में खास तरीके से ऊर्जा खपत कम करने का नियामकीय औजार है। इसके तहत संबंधित बाजार आधारित तंत्र के जरिये सरप्लस ऊर्जा की बचत के सर्टिफिकेशन के जरिये इसकी लागत को कम किया जा सकता है और बची हुई ऊर्जा का इस्तेमाल किया जा सकता है। पीएटी चक्र-1 में 478 डीसी थे, जो कुल कुल 8 क्षेत्रों से जुड़े थे, जिनमें एल्युमीनियम, सीमेंट, क्लोर-क्षार, उर्वरक, आयरन और स्टील, पेपर, ताप विद्युत संयंत्र, कपड़ा शामिल हैं। इन क्षेत्रों को विशेष ऊर्जा खपत (एसईसी) यानि प्रति ईकाई उत्पादन में इस्तेमाल की जाने वाली ऊर्जा को कम करने का लक्ष्य दिया गया था।

कुल मिलाकर, एसईसी कटौती के लक्ष्य का मकसद 6.686 करोड़ टन एमटीओई (ईंधन के समकक्ष) ऊर्जा की बचत हासिल करना है। इन उद्योगों में पीएटी को लागू किए जाने से साल 2015 में 8.67 एमटीओई ऊर्जा की बचत हुई, जो 'पहले चक्र' में देश की कुल प्राथमिक ऊर्जा आपूर्ति का 1.25 फीसदी है। ऊर्जा की इस बचत के जरिये 3.1 करोड़ टन कार्बन डाइऑक्साइड भी कम होना मुमकिन होता है।

पीएटी चक्र 1 के तय उपभोक्ताओं डेज़िगनेटेड कंज़्यूमर्स (डीसी) की ऊर्जा बचत को आदान प्रदान के योग्य ऊर्जा बचत प्रमाण पत्र में बदल दिया गया है। तकरीबन 38.25 लाख ऐसे ऊर्जा प्रमाण पत्र 306 तय उपभोक्ताओं को जारी किए गए हैं, जबकि 110 निर्धारित उपभोक्ताओं को इसके पालन के लिए 14.25 लाख ऐसे प्रमाण पत्र खरीदने पड़े। साल 2018 तक कुल 12.98 लाख प्रमाण पत्रों की ट्रेडिंग हुई और इससे कुल 100 करोड़ का कारोबार हुआ।

पीएटी के 'दूसरा चक्र' के लिए मार्च 2016 में अधिसूचना जारी की गई, जिसमें 11 क्षेत्रों के 621 डीसी को शामिल किया गया। इनमें ऊपर बताए गए 8 क्षेत्रों के अलावा तीन नए क्षेत्र भी थे- रेलवे, रिफाइनरीज और डिस्कॉम। दूसरे चक्र के पैट का मकसद कुल 8.869 एमटीओई ऊर्जा खपत का लक्ष्य हासिल करना है। चूंकि पीएटी योजना में हर साल नए क्षेत्र और तय उपभोक्ता जुड़ते जा रहे हैं, लिहाजा पीएटी का 'तीसरा चक्र' मार्च 2017 में जारी किया गया और उसका मकसद कुल ऊर्जा खपत में 1.06 एमटीओई की कमी का लक्ष्य हासिल करना है। इसके लिए बड़े पैमाने पर ऊर्जा आधारित 6 क्षेत्रों से 116 डीसी (तय उपभोक्ता) में ऊर्जा कटौती के लिए लक्ष्य तय किए गए हैं। पीएटी के 'चौथे चक्र' के लिए लक्ष्य के बारे में मार्च 2018 में अधिसूचना जारी की गई, जिसके तहत मौजूदा क्षेत्रों से 109 डीसी को शामिल किया गया और दो नए क्षेत्र-पेट्रोकेमिकल और व्यावसायिक इमारत (होटल) भी जोड़े गए और इस संबंध में एसईसी कटौती का कुल लक्ष्य 6.9978 लाख टन एमटीओई रखा गया। फिलहाल, पीएटी चक्र- 2,3,4 और 5 के तहत 13 ऊर्जा केंद्रित क्षेत्रों से कुल 956 तय ग्राहक हैं और इस सिलसिले में निर्धारित लक्ष्यों को हासिल करने के लिए ऊर्जा दक्षता परियोजनाओं को लागू किया जा रहा है।

कुल मिलाकर, एसईसी कटौती के लक्ष्य का मकसद 6.686 करोड़ टन एमटीओई (ईंधन के समकक्ष) ऊर्जा की बचत हासिल करना है। इन उद्योगों में पीएटी को लागू किए जाने से साल 2015 में 8.67 एमटीओई ऊर्जा की बचत हुई, जो 'पहले चक्र' में देश की कुल प्राथमिक ऊर्जा आपूर्ति का 1.25 फीसदी है। ऊर्जा की इस बचत के जरिये 3.1 करोड़ टन कार्बन डाइऑक्साइड भी कम होना मुमकिन होता है।

रियल एस्टेट (भूमि भवन) क्षेत्र

ऊर्जा दक्षता ब्यूरो (बीईई) ने रिहायशी क्षेत्र के लिए ऊर्जा संरक्षण कोड विकसित करने के लिए चरणबद्ध तरीके की पेशकश की है। इसका मकसद आसान और लागू करने योग्य कोड तैयार करना है, जिसे मौजूदा कोड और कानूनों के साथ जोड़ा जा सके।

भवन आवरण (एनवलप) की डिजाइन का सीधा असर इन चीजों पर होगा:

- छत, दीवारों और कांच की खिड़कियों के जरिये ऊष्मा चालन
- कांच की खिड़कियों के जरिये सौर विकिरण लाभ
- प्राकृतिक वायु संचार
- दिन का प्रकाश

भारत में सालाना ऊर्जा की कुल खपत में रियल एस्टेट क्षेत्र की 30 फीसदी से भी ज्यादा की हिस्सेदारी है और औद्योगिक क्षेत्र के बाद यह ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन का दूसरा सबसे बड़ा जरिया है। रियल एस्टेट क्षेत्र में तकरीबन 75 फीसदी ऊर्जा रिहायशी घरों में इस्तेमाल की जाती है।

अतः बनने वाले आवरण का असर उन सुविधाओं के अलावा जगह के लिए इस्तेमाल की गई बिजली पर भी होगा। इस सिलसिले में बीईई के पास दो कार्यक्रम हैं

(1) पर्यावरण संहिता, रिहायशी इमारतों के लिए ऊर्जा संरक्षण इमारत कोड और (2) ऊर्जा दक्षता वाले घरों के लिए लेबलिंग।

पर्यावरण संहिता (रिहायशी इमारतों के लिए ऊर्जा संरक्षण इमारत कोड)

इको-निवास संहिता (भाग 1: इमारत आवरण (एनवलप) तैयार करना) इसका मकसद ऊष्मा लाभ और उष्मा नुकसान को सीमित करने के लिए न्यूनतम इमारत आवरण (एनवलप) प्रदर्शन स्तर तय करना और हवाओं की प्राकृतिक आवाजाही और दिन की रोशनी सुनिश्चित करना है। यह कोड 500 मीटर वर्ग क्षेत्र या इससे ज्यादा के भूखंड पर बनी रिहायशी भवन परियोजनाओं पर लागू होगा। इस कोड को विशेष तौर पर इस तरह से विकसित किया गया है, ताकि स्थानीय शहरी निकाय से जुड़े कानूनों के जरिये इसे अपनाया जा सके। इस रणनीति के जरिये ज्यादातर नए शहरी घरों को ऊर्जा दक्षता के लाभ से जोड़ना है।

पहला भाग – भवन आवरण (एनवलप) डिजाइन इको-निवास का पहला भाग है। इसे तत्काल लागू करने का मकसद नए रिहायशी घरों के स्टॉक के निर्माण और डिजाइन को बेहतर बनाना था, ताकि इसमें गर्मी के लिए कम गुंजाइश हो और ऊर्जा की अनुमानित मांग भी कम हो सके। आवरण निर्माण और डिजाइन में किए गए निवेश से भवन में लंबे समय तक कम ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन का लाभ मिल सकेगा।

इस कोड को इस तरह से तैयार किया गया है, ताकि इस पर अमल करना बेहद आसान हो। इसके लिए सिर्फ रिहायशी भवनों के नक्शे पर आधारित अंकगणितीय गणना की जरूरत होगी। यह भवनों का नक्शा बनाने वाले पेशेवरों और इंजीनियरों के इस्तेमाल के योग्य होगा और इसमें किसी विशेष कौशल या अन्य सॉफ्टवेयर की जरूरत नहीं होगी। इससे कोड का उपयोग भवन नियमों और नियामकीय ढांचे में आसानी से हो पाएगा और बड़ी परियोजनाओं के लिए पर्यावरण संबंधी मंजूरी के लिए आसानी से गुंजाइश बन सकेगी।

ऊर्जा दक्षता वाले घरों के लिए लेबलिंग कार्यक्रम

उपभोक्ताओं को अक्षय ऊर्जा के नजरिये से भवनों की तुलना करने में सक्षम बनाने के लिए व्यापक लेबलिंग कार्यक्रम महत्वपूर्ण है। ऊर्जा लेबल उपभोक्ताओं को प्रत्यक्ष, भरोसेमंद और सस्ती जानकारी वाले प्रावधान के माध्यम से बेहतर फैसले लेने में मदद करते हैं। प्रस्तावित लेबलिंग कार्यक्रम का मकसद चित्र-1 में बताया गया है।

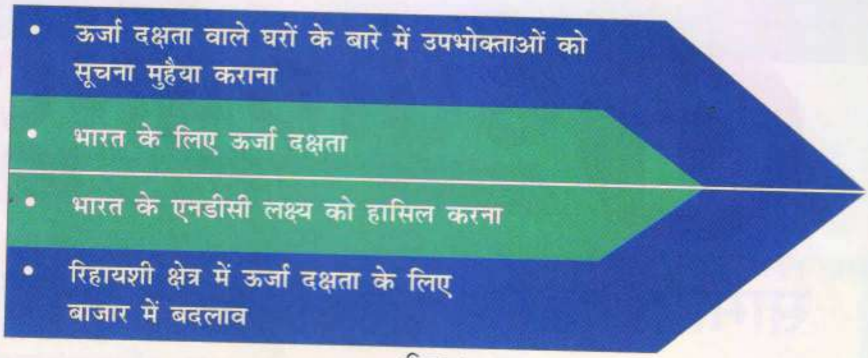

चित्र-1

इससे पूरे देश में ऊर्जा दक्षता की स्थिति को बेहतर कर बड़े पैमाने पर ऊर्जा की बचत होने का अनुमान है। प्रस्तावित लेबलिंग कार्यक्रम के जरिये साल 2030 तक तकरीबन 388 बीयू ऊर्जा की बचत की संभावना है।

इसके अलावा, इस कार्यक्रम के कई और फ़ायदे हैं:

- यह ऊर्जा दक्षता से जुड़े बाजार और तकनीक को बढ़ावा देने के लिए आधार का काम करेगा। ऊर्जा दक्षता का लेबल हासिल करने के मकसद से उपभोक्ता ऊर्जा दक्षता वाली सामग्री की मांग करेंगे, जिसके परिणामस्वरूप आपूर्तिकर्ताओं को इस तरह की सामग्री के उत्पादन का ज्यादा अवसर मिलेगा।
- लेबलिंग प्रणाली के लागू होने के बाद आवासीय मूल्य शृंखला अतिरिक्त संख्या में पेशेवरों को आवासीय लेबल अनुदान की प्रक्रिया पूरी करने के लिए प्रोत्साहित करेगी। इस तरह से लेबलिंग प्रणाली भारतीय रोज़गार बाजार के लिए प्रोत्साहन की भी भूमिका अदा करेगी।
- यह भारत में सामग्री विनिर्माताओं को ऊर्जा के लिहाज से दक्ष सामग्री के निर्माण के लिए भी प्रेरित करेगी।
- लेबलिंग प्रणाली ऊर्जा खर्च में भी कटौती के लिए गुंजाइश बनाएगी। इससे उपभोक्ता के पास खर्च करने योग्य आय ज्यादा होगी, जिसे अन्य चीजों पर खर्च किया जा सकता है, भविष्य की आपातकालीन जरूरतों के लिए बचाकर रखा जा सकता है या नकदी पैदा करने वाली संपत्तियों को तैयार करने के मकसद से निवेश किया जा सकता है।
- इससे संयुक्त राष्ट्र के वैश्विक सतत विकास उन लक्ष्यों को पूरा करने में भी मदद मिलेगी, जिसका मकसद किफायती और स्वच्छ ऊर्जा पैदा करना है।

उपभोक्ता उपकरण

उपभोक्ता उपकरण ऊर्जा की खपत से जुड़ा अहम क्षेत्र है। इसके दायरे में एसी, माइक्रोवेव, वॉशिंग मशीन आदि जैसे घरेलू इलेक्ट्रॉनिक उपकरण शामिल हैं। टिकाऊ उपभोक्ता सामग्री क्षेत्र में ऊर्जा की बचत संबंधी तकनीक को बढ़ावा देने के लिए कई तरह के कदम उठाए जा रहे हैं।

ऊर्जा दक्षता ब्यूरो (बीईई) एयर कंडीशनरों के लिए अधिकतम तापमान सेटिंग के जरिये ऊर्जा संरक्षण को बढ़ावा दे रहा है। बीईई के अध्ययन के मुताबिक, एसी तापमान सेटिंग में एक डिग्री की बढ़ोतरी के परिणामस्वरूप बिजली की खपत में 6 फीसदी की कमी आती है। ऊर्जा की बचत और ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के लिए 24-26 डिग्री सेल्सियस की डिफॉल्ट सेटिंग की सिफारिश की गई है।

माइक्रोवेव ओवन घरों में काफी लोकप्रिय होता जा रहा है और इसमें ऊर्जा दक्षता और बेहतर तकनीक को बढ़ावा देने के लिए उपाय किए जा रहे हैं। स्टार रेटिंग वाले माइक्रोवेव ओवन और वॉशिंग मशीन को अपनाकर साल 2030 तक 3 अरब यूनिट से भी ज्यादा बिजली की बचत करने का अनुमान है। इस तरह से इन उपायों के जरिये साल 2030 तक ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में 24 लाख टन कार्बन डाइऑक्साइड की कमी हो सकती है। □

सतत ऊर्जा के पर्यावरण अनुकूल विकल्प

एन भद्रन नायर

सतत विकास क्या है? सतत विकास "वह विकास है जो भविष्य की पीढ़ियों की क्षमताओं और बेहतरी से समझौता किए बगैर वर्तमान समय की जरूरतों को पूरा करता हो" यानि दूसरे शब्दों में कहें तो ऐसा आर्थिक विकास जिसमें प्राकृतिक संसाधनों को बर्बाद होने की गुंजाइश नहीं के बराबर हो।

भारत को आज़ादी मिलने के बाद उसे अपने तकरीबन 33 करोड़ लोगों की आजीविका की जरूरतों को पूरा करने के लिए खेती के साधनों और राष्ट्रीय आधारभूत संरचना को विकसित कर देश के विकास के पथ पर ले जाना था। 1970 के दशक में सतत विकास ने वैश्विक समुदाय के विचारों को आकर्षित नहीं किया। 1972 में स्टॉकहोम में हुए संयुक्त राष्ट्र के सम्मेलन में इस वैश्विक संस्था ने इंसानों के लिए एक सेहतमंद और उत्पादक दुनिया बनाने के लिए पर्यावरण और इसकी जैव-विविधता की सुरक्षा को बढ़ाने को लेकर चिंताएं पेश कीं। भारत समेत विकासशील देशों की दलील थी कि उनकी प्राथमिकता विकास है, जबकि विकसित देशों ने वैश्विक एजेंडे में पर्यावरण की सुरक्षा और संरक्षण को आगे लाने के लिए तर्क दिया।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक, जलवायु परिवर्तन स्वास्थ्य के सामाजिक और पर्यावरण संबंधी पहलुओं पर बुरा असर डालता है- मसलन साफ हवा, पीने का शुद्ध पानी, खाद्य सुरक्षा और आवास। जलवायु परिवर्तन के कारण साल 2030 से 2050 के दौरान हर साल तकरीबन ढाई लाख अतिरिक्त मौतें होने की आशंका है। ये मौतें कुपोषण, मलेरिया, डायरिया और गर्मी के प्रकोप जैसी बीमारियों से हो सकती हैं। साल 2030 तक स्वास्थ्य पर इस सिलसिले में खर्च 2-4 अरब डॉलर होने का अनुमान है

प्राचीन काल में भारत के लोग प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाकर रखते थे- प्रकृति और इसकी पूजा व इससे संबंधित रचनाओं की पूजा करने का मूल इसी सिद्धांत पर

लेखक इंडियन साइंस जर्नल के कार्यकारी संपादक हैं। ईमेल: nbnair9@gmail.com

आधारित है। हालांकि, बीते और वर्तमान दौर में हमने अपने प्राकृतिक संसाधनों के साथ लूट मचाई रखी है और सतत विकास को बिल्कुल अहमियत नहीं जा रही है। हम अपने पूर्वजों की उस कहावत को भूल जाते हैं कि मौजूदा पीढ़ी सिर्फ प्राकृतिक संसाधनों की रखवाली है और उसकी ज़िम्मेदारी है कि वह इसे बिना नष्ट किए भविष्य की अपनी पीढ़ियों को सौंपे। भारत के विकसित देशों की पंक्ति में खड़ा होने की दिशा में बढ़ने के साथ ही यह मुल्क विकास और ऊर्जा सुरक्षा में आत्मनिर्भरता हासिल करने में सक्रिय है। साथ ही, यह पर्यावरण सुरक्षा अभियान से भी पूरी तरह से जुड़ सकता है, क्योंकि प्रकृति की सुरक्षा हमारे देश के डीएनए में है।

भारत अचानक से ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन के 'खिलाफ लड़ाई' में सक्रिय हो गया है और उसने विकास से जुड़ी अपनी नीतियों और ऊर्जा उत्पादन में काफी बदलाव किए हैं। साथ ही, ग्लोबल वार्मिंग में अपने योगदान को भी कम करने की कोशिश की है। दरअसल, भारत आज इन चीजों के खिलाफ वैश्विक अभियान में अगली पंक्ति में खड़ा है।

भारत की ऊर्जा संबंधी जरूरतें कोयला और तेल जैसे परंपरागत साधनों से पूरी हो रही हैं। हालांकि, जीवाश्म ईंधन के जलवायु और ग्लोबल वार्मिंग पर असर को लेकर दुनियाभर में चिंताओं को देखते हुए भारत ने उन विकल्पों को ढूंढना शुरू कर दिया है, जिनसे पर्यावरण में कार्बन का उत्सर्जन कम होता है। जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए तेजी से समाधान ढूंढने की जरूरत के बारे में अब वैश्विक स्तर पर जागरूकता बढ़ रही है, जिससे तेज तूफान, खतनारक लू, बार-बार सूखे जैसे हालात और समुद्र का जलस्तर बढ़ने का खतरा पैदा हो रहा है। इसका सीधा असर खाद्यान्न उत्पादन, आजीविका, स्वास्थ्य और पर्यावरण पर भी है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक, जलवायु परिवर्तन स्वास्थ्य के सामाजिक और पर्यावरण संबंधी पहलुओं पर बुरा असर डालता है- मसलन साफ हवा, पीने का शुद्ध पानी, खाद्य सुरक्षा और आवास। जलवायु परिवर्तन के कारण साल 2030 से 2050 के दौरान हर साल तकरीबन ढाई लाख अतिरिक्त मौतें होने की आशंका है। ये मौतें कुपोषण,

भारत ने जलवायु परिवर्तन पर ऐतिहासिक पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर किया है। इस समझौते ने राष्ट्रीय संकल्पित योगदान (एनडीसी) के जरिये जलवायु परिवर्तन के खिलाफ लड़ने के लिए सभी देशों को एकजुट किया है। साथ ही इससे आने वाले वर्षों में इससे जुड़े प्रयासों को मजबूती भी मिलेगी।

मलेरिया, डायरिया और गर्मी के प्रकोप जैसी बीमारियों से हो सकती हैं। साल 2030 तक स्वास्थ्य पर इस सिलसिले में खर्च 2-4 अरब डॉलर होने का अनुमान है।

चूंकि जलवायु परिवर्तन मौजूदा समय का ज्वलंत मसला है, लिहाजा इस वैश्विक संस्था ने परिवहन की बेहतर व्यवस्था, खाद्यान्न के ऊर्जा बेहतर इस्तेमाल के जरिये ग्रीनहाउस गैसों के उत्सजर्न को कम करने की पहल की है। खास तौर पर वायु प्रदूषण को लेकर ऐसा किया गया है।

भारत ने जलवायु परिवर्तन पर ऐतिहासिक पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर किया है। इस समझौते ने राष्ट्रीय संकल्पित योगदान (एनडीसी) के जरिये जलवायु परिवर्तन के खिलाफ लड़ने के लिए सभी देशों को एकजुट किया है। साथ ही इससे आने वाले वर्षों में इससे जुड़े प्रयासों को मजबूती भी मिलेगी।

वैश्विक कार्बन परियोजना के हालिया अनुमानों के मुताबिक, भारत में मजबूत सालाना आर्थिक विकास के कारण 2018 में उत्सर्जन में 6.3 फीसदी बढ़ोतरी होने का अनुमान है। चीन (27 फीसदी), अमेरिका (15 फीसदी) और यूरोपीय संघ (10 फीसदी) समेत भारत (7 फीसदी) 2017 में चार प्रमुख उत्सर्जकों में शामिल रहा। बाकी दुनिया का योगदान 41 फीसदी रहा।

कोयला अब भी भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है। हालांकि, वैश्विक स्तर पर कोयले का इस्तेमाल ऐतिहासिक स्तर पर रिकॉर्ड स्तर से कम हो गया है, लेकिन भारत में इसका उपयोग बढ़ने का अनुमान है। भारत में ऊर्जा की खपत के कारण ऐसा होगा। इसके जीडीपी और औद्योगिक उत्पादन के कारण बिजली की मांग और इसके उत्पादन में बढ़ोतरी जारी रहेगी।

भारत ने गैर-परंपरागत साधनों के इस्तेमाल के जरिये ऊर्जा बास्केट में जीवाश्म ईंधन की हिस्सेदारी को कम करने के लिए अब अभियान शुरू किया है। अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन का सदस्य होने के भारत के पास साफ-सुथरी ऊर्जा वाले साधनों से जुड़ने की सहूलियत है और वह स्मॉग से परेशान शहरों को साफ कर सकता है।

राष्ट्रीय सौर मिशन देश की ऊर्जा सुरक्षा की चुनौती से निपटते हुए पर्यावरण के लिहाज से अनुकूल टिकाऊ विकास को बढ़ावा देता है और इस तरह से जलवायु परिवर्तन की समस्या को दूर करने की दिशा में हो रहे वैश्विक प्रयासों में योगदान करता है।

भारत ने अक्षय ऊर्जा की क्षमता में बढ़ोतरी के लिए महत्वाकांक्षी कार्यक्रम शुरू किया है। इसके तहत एनडीसी लक्ष्य को पूरा करने के लिए साल 2030 तक कुल ऊर्जा उत्पादन में गैर-जीवाश्म ईंधन स्रोतों की 40 फीसदी हिस्सेदारी का लक्ष्य हासिल करने की

बात है। यह लक्ष्य भारत को अक्षय ऊर्जा के इस्तेमाल में वैश्विक नेताओं की जमात में ला खड़ा करेगा।

अगर भारत ऊर्जा का वैकल्पिक और टिकाऊ साधन विकसित कर लेता है, तो इस देश को कच्चे तेल के आयात की जरूरत नहीं पड़ेगी। ऊर्जा शोध से जुड़े वैज्ञानिकों के मुताबिक, भारत में कच्चे तेल के वैकल्पिक साधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।

भारत के चालू खाता घाटा (सीएडी) के लिए कच्चे तेल का आयात प्रमुख रूप से जिम्मेदार है। भारत का चालू खाता घाटा फिलहाल 49 अरब डॉलर है या सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 1.9 फीसदी है। चालू खाता घाटे में लगातार बढ़ोतरी देश के लिए चिंता का विषय है और अगर यह जीडीपी के 3 फीसदी के आंकड़े को पार कर जाता है, तो इससे आर्थिक स्थिरता पर काफी बुरा असर पड़ेगा।

इसके अलावा, भारत का आयात बड़े पैमाने पर भूराजनीतिक हालात से प्रभावित होता है, मसलन अमेरिका द्वारा ईरान से आयात पर पाबंदी लगाने की धमकी। ईरान भारत के लिए कच्चे तेल का दूसरा सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है।

भारत के वैज्ञानिकों ने नालियों के कचरे को जैवईंधन में कचरे और बिजली में बदलने की एक और तकनीक पेश की है। दिल्ली में शुरू किया सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट (एसटी) रोजाना 10 लाख लीटर ऐसे कचरे को तीन टन जैवईंधन में बदलेगा।

भारत में बायोमास से तरल और गैसीय ईंधन बनाने की जबरदस्त संभावना है। आयात पर निर्भरता को धीरे-धीरे कम करने की रणनीति पर काम शुरू किया गया है। इस रणनीति का मकसद 2022 तक कच्चे तेल के आयात पर निर्भरता में 10 फीसदी तक कटौती करना है।

जैवईंधन के अलावा भारत में सौर, पवन, भूताप, महासागर ताप ऊर्जा से भी हरित ऊर्जा पैदा करने की संभावना है। ये सभी गैर-कार्बन वाले विकल्प हैं और मांग प्रतिस्थापन के जरिये कार्बन आयात को कम करने में मददगार हो सकते हैं। साथ ही, ऊर्जा के क्षेत्र में पवन-सौर और पवन-सौर-जैव ईंधन जैसे हाइब्रिड भी उभरने की संभावना है।

पर्यावरण संबंधी प्रदूषण का एक बड़ा साधन परमाणु से बिजली का उत्पादन है। परमाणु संयंत्र जीवाश्म ईंधन संयंत्रों के मुकाबले 50 फीसदी ज्यादा ताप प्रदूषण फैलाते हैं। भारत के पास फिलहाल चुनौती अपनी विशाल आबादी की आकांक्षाओं को पूरा करते हुए और आर्थिक विकास और सामाजिक विकास का त्याग किए बिना किफायती दर पर ऊर्जा की उपलब्धता सुनिश्चित करना है।

भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में सड़क परिवहन क्षेत्र की 6.7 फीसदी है। एक अनुमान के मुताबिक, फिलहाल सिर्फ डीजल 72 फीसदी परिवहन संबंधी ईंधन जरूरतों को पूरा करता है, जबकि इस मामले में पेट्रोल की हिस्सेदारी 23 फीसदी है और बाकी योगदान सीएनजी, एलपीजी जैसे ईंधन के अन्य साधनों का है, जिनकी मांग में लगातार बढ़ोतरी हो रही है।

कच्चे तेल का घरेलू उत्पादन कुल मांग का पांचवां हिस्सा यानि 20 फीसदी ही पूरा कर पाता है, जबकि बाकी जरूरतें आयातित कच्चे तेल से पूरी होती हैं। जब तक अक्षय ऊर्जा पर आधारित वैकल्पिक संसाधन विकसित नहीं होते, तब तक भारत की ऊर्जा सुरक्षा संवेदनशील बनी रहेगी।

हालांकि, ऊर्जा के गैर-परंपरागत साधन भी पर्यावरण को थोड़ा बहुत नुकसान पहुंचाते हैं, लेकिन यह बेहतर विकल्प है। जाहिर तौर पर यह पर्यावरण का अपेक्षाकृत कम बड़ा दुश्मन है। जीवाश्म ईंधन-कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस ज्यादातर लिहाज से अक्षय ऊर्जा के साधनों की तुलना में ज्यादा नुकसान पहुंचाता है, जीवाश्म ईंधन से वायु और जल समेत तमाम तरह के प्रदूषण, लोगों के स्वास्थ्य, वन्य जीवन, जमीन के इस्तेमाल, पानी के इस्तेमाल और ग्लोबल वार्मिंग उत्सर्जन पर ज्यादा बुरी तरह से प्रभावित होते हैं।

कोयले की खुदाई और इसके इस्तेमाल ने इसके दूरगामी दुष्परिणामों के साथ पर्यावरण पर काफी बुरा असर छोड़ा है। देश की बिजली का तकरीबन 65 फीसदी हिस्सा ताप पावर से पैदा होता है, जिसके लिए कच्चा माल कोयला ही है। बॉयलर-टर्बाइन रूट के जरिये बिजली उत्पादन से पार्टिक्यूलेट मैटर, कार्बन डायऑक्साइड, सल्फर और नाइट्रस ऑक्साइड निकलता है, जिससे वातावरण में प्रदूषण फैलता है।

ऊर्जा का दूसरा प्रमुख साधन तेल है। तेल प्रदूषण 21वीं सदी में जिंदगी का ऐसा सच है, जिससे बचा नहीं जा सकता है- खास तौर पर ऐसी स्थिति में जब करोड़ों लोग परिवहन के विभिन्न साधनों के लिए तेल पर निर्भर हैं। तेल निकालने की प्रक्रिया, परिवहन और तेल के भंडारण के कारण प्राकृतिक और मानवीय पर्यावरण को काफी नुकसान पहुंचता है। भारत ने साल 2030 तक पेट्रोल और डीजल गाड़ियों को खत्म करने का लक्ष्य तय किया है। भारतीय ऑटो क्षेत्र दुनिया के सबसे तेजी से बढ़ रहे उद्योगों में शामिल है। एक अनुमान के मुताबिक साल 2020 तक देश में यात्री वाहनों, व्यावसायिक वाहनों और दोपहिया वाहनों की सालाना मांग बढ़कर 4.67 करोड़ होगी और इस तरह से भारत दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा वाहन बाजार बन जाएगा।

अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (आईईए) के अनुमानों के मुताबिक, दुनियाभर में ऊर्जा की खपत में वैश्विक स्तर पर परिवहन क्षेत्र की हिस्सेदारी 30 फीसदी है और यह कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन का दूसरा सबसे बड़ा स्रोत है। ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन की 20 फीसदी हिस्सेदारी है। देश के राष्ट्रीय विद्युत गतिशीलता मिशन का मकसद 2030 तक पूरी तरह से इलेक्ट्रिक गाड़ियों पर निर्भरता के जरिये आर्थिक विकास के प्रतिकूल प्रभाव को कम करना है। पर्यावरण संबंधी प्रदूषण का एक बड़ा साधन परमाणु से बिजली का उत्पादन है। परमाणु संयंत्र जीवाश्म ईंधन संयंत्रों के मुकाबले 50 फीसदी ज्यादा ताप प्रदूषण फैलाते हैं। भारत के पास फिलहाल चुनौती अपनी विशाल आबादी की आकांक्षाओं को पूरा करते हुए और आर्थिक विकास और सामाजिक विकास का त्याग किए बिना किफायती दर पर ऊर्जा की उपलब्धता सुनिश्चित करना है। ❑

भारत में अक्षय ऊर्ज़ा का वित्त पोषण

पी सी मैथानी

भारत के लिए पेरिस समझौते के तहत राष्ट्रीय संकल्प योगदान (एनडीएस) के लक्ष्य को पूरा करने और अक्षय ऊर्जा की तरफ बढ़ने की दिशा में अक्षय ऊर्जा क्षेत्र की सफलता काफी अहम है। भारत ने साल 2030 तक अपने एनडीसी में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्ज को 33 से 35 फीसदी घटाकर इसे 2005 के स्तर से नीचे करने की प्रतिबद्धता जताई है। साथ ही, साल 2030 अपनी ऊर्जा क्षमता का 40 फीसदी हिस्सा तक गैर-जीवाश्म स्रोतों से हासिल करने का लक्ष्य तय किया है। इसके अलावा, भारत ने घरेलू स्तर पर साल 2022 तक 175 गीगावॉट अक्षय ऊर्जा का महत्वाकांक्षी लक्ष्य तैयार किया है। राष्ट्रीय विद्युत योजना में 2027 तक इसे और बढ़ाकर 275 गीगावॉट करने की बात है। निश्चित तौर पर यह मौजूदा स्थिति के मुकाबले बड़े बदलाव की बात है और इसमें बेहतर तंत्र, अनुकूल नीतियों और नई टेक्नोलॉजी और निवेश की उपलब्धता के साथ नए नज़रिये की ज़रूरत होगी।

राष्ट्रीय प्रयासों के तहत भारत ने व्यापक स्तर पर अक्षय ऊर्जा कार्यक्रम की शुरुआत की है, जिसमें ग्रिड पावर, ऑफ-ग्रिड पावर, आधुनिक रसोई ऊर्जा, उद्योग और कई अन्य जगहों पर ताप संबंधी उपयोग जैसी कई चीजें शामिल हैं। पिछले कुछ समय में अक्षय ऊर्जा वास्तविक बहु-लाभकारी प्रणाली के तौर पर उभरक सामने आया है, जिसमें घरेलू प्राथमिकताओं और आर्थिक अवसरों के साथ पारिस्थितिकी तंत्र से जुड़ी जरूरतों का संयुक्त मामला है। यह ऊर्जा सुरक्षा, ऊर्जा उपलब्धता, ऊर्जा की बढ़ती मांग और घरेलू रोज़गार सृजन जैसी जटिल चुनौतियों के लिए भी समाधान मुहैया कराता है। फिलहाल देश में जमीनी स्तर पर 77 गीगावॉट की ऊर्जा क्षमता और 54 गीगावॉट की क्षमता से जुड़ा काम विभिन्न चरणों में है। इस तरह से भारत साल 2022 तक 175 गीगावॉट के अपने महत्वाकांक्षी लक्ष्य को पूरा करने की दिशा में सक्रिय है।

अक्षय ऊर्जा विकास के लिए नीतिगत परिदृश्य भी जरूरतों के मुताबिक विकसित और बेहतर हो रहा है। अक्षय ऊर्जा से जुड़ी परियोजनाएं पर मुख्य तौर पर निजी क्षेत्र में काम हो रहा है। अक्षय ऊर्जा क्षेत्र को सहारा देने के लिए सरकार की तरफ से ये कदम उठाए गए हैं: आर्थिक और अन्य प्रोत्साहन मसलन पूंजी संबंधी सब्सिडी, बोली लगाने की पारदर्शी और प्रतिस्पर्धी प्रक्रिया के लिए दिशा-निर्देश, अंतरराज्यीय प्रणाली (आईएसटीएस) शुल्क और नुकसान को माफ किया जाना, व्यवहार्यता अनुदान योजना (वीजीएफ), अक्षय ऊर्जा प्रणाली और

पिछले कुछ समय में अक्षय ऊर्जा वास्तविक बहु-लाभकारी प्रणाली के तौर पर उभरक सामने आया है, जिसमें घरेलू प्राथमिकताओं और आर्थिक अवसरों के साथ पारिस्थितिकी तंत्र से जुड़ी जरूरतों का संयुक्त मामला है। यह ऊर्जा सुरक्षा, ऊर्जा उपलब्धता, ऊर्जा की बढ़ती मांग और घरेलू रोज़गार सृजन जैसी जटिल चुनौतियों के लिए भी समाधान मुहैया कराता है। फिलहाल देश में जमीनी स्तर पर 77 गीगावॉट की ऊर्जा क्षमता और 54 गीगावॉट की क्षमता से जुड़ा काम विभिन्न चरणों में है। इस तरह से भारत साल 2022 तक 175 गीगावॉट के अपने महत्वाकांक्षी लक्ष्य को पूरा करने की दिशा में सक्रिय है

लेखक नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय में सलाहकार हैं। ईमेल: pcmaithani@nic.in

उपकरणों के स्तर में बेहतरी और ऑटोमेटिक रूट के जरिये इस क्षेत्र में 100 प्रतिशत तक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश आदि। साल 2022 तक कुल स्थापित ऊर्जा क्षमता में अक्षय ऊर्जा की हिस्सेदारी 37 फीसदी तक पहुंच जाने का अनुमान है। अगर इसमें बड़े हाइड्रो (जल विद्युत परियोजना) को शामिल किया जाता है, तो कुल ऊर्जा में गैर-जीवाश्म ईंधन विद्युत क्षमता की हिस्सेदारी तकरीबन 48 फीसदी हो जाएगी।

पिछले कुछ समय में भारत अक्षय ऊर्जा में निवेश के लिए पसंदीदा ठिकाना बना है। संस्थान, बैंक और पंजीकृत कंपनियां समेत कई तरह के निवेशक भारत में अक्षय ऊर्जा से जुड़ी परियोजनाओं का वित्त पोषण करते हैं। संस्थागत निवेशकों में सरकारी, निजी या द्विपक्षीय और बहुपक्षीय संस्थान शामिल हैं। जहां तक इसमें बैंकों की भूमिका की बात है, तो इसमें निजी और सरकारी दोनों क्षेत्रों के बैंक शामिल हैं। पंजीकृत कंपनियों के अलावा वेंचर कैपिटल और प्राइवेट इक्विटी निवेशक भी इक्विटी निवेश में योगदान करते हैं। भारतीय अक्षय ऊर्जा विकास एजेंसी (आईरईडीए) जैसे विकास बैंक अक्षय ऊर्जा के लिए फंड का अहम जरिया हैं। उदार विदेशी निवेश नीति के कारण विदेशी निवेशकों को वित्तीय तथा तकनीकी साझीदारी और अक्षय ऊर्जा आधारित विद्युत उत्पादन परियोजनाओं को स्थापित करने में भारतीय साझीदार के साथ मिलकर काम करने की इजाजत दी गई है।

हाल के वर्षों में भारतीय अक्षय ऊर्जा क्षेत्र को प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) के रूप में तकरीबन 3.2 अरब डॉलर मिले हैं। सीईईडब्ल्यू, नई दिल्ली की एक अध्ययन रिपोर्ट के अनुमानों के मुताबिक, साल 2000 से 2017-18 के दौरान अक्षय ऊर्जा में एफडीआई की हिस्सेदारी 1.7 फीसदी से लगभग दोगुनी बढ़कर तकरीबन 3 फीसदी हो गई। साथ ही, अक्षय ऊर्जा को लेकर भारत के महत्वाकांक्षी लक्ष्य को देखते हुए कहा जा सकता है कि यह सिलसिला इसी तरह से आगे भी जारी रहने की उम्मीद है। अक्षय ऊर्जा क्षेत्र को 15 करोड़ रुपये तक का कर्ज मुहैया कराने के लिहाज से प्राथमिकता वाला क्षेत्र का दर्जा देने जैसे अहम प्रावधान भी किए गए हैं। इसके तहत सौर ऊर्जा, बायोमास, पवन ऊर्जा, छोटी जल विद्युत परियोजनाओं के अलावा अक्षय ऊर्जा आधारित सार्वजनिक इकाइयों द्वारा सड़कों पर बिजली लगाने संबंधी प्रणाली और दूर-दराज के गांवों में विद्युतीकरण के लिए प्राथमिकता के आधार पर कर्ज देने की बात है।

मोटे अनुमानों के मुताबिक, आज की कीमतों के लिहाज से (कीमतों में गिरावट है; अतः वास्तविक कीमत कम होगी) साल 2022 तक (ट्रांसमिशन लाइन के बगैर) अक्षय ऊर्जा से जुड़े संयंत्रों में अतिरिक्त निवेश तकरीबन 80 अरब डॉलर होगा। इसके अलावा, साल 2023-20130 के दौरान तकरीबन 25 करोड़ डॉलर और निवेश की जरूरत होगी। अतः, अगले दशक और इससे आगे के समय में हर साल 30 अरब डॉलर के निवेश का असर मिलने की संभावना है।

ऊर्जा क्षेत्र का वित्तीय परिदृश्य अहम बदलावों से गुज़र रहा है। कई मौकों पर अक्षय ऊर्जा की प्रतिस्पर्धा ऊर्जा की अन्य तकनीक के साथ देखने को मिलती है, ऐसे में वित्तीय बाजारों ने अक्षय ऊर्जा वित्त के मामले में बुनियादी बदलाव की दिशा में खुद को आगे बढ़ाना शुरू कर दिया है। अक्षय ऊर्जा के लिए जरूरी तत्काल बड़ी पूंजी और लागत की चुनौती से निपटने के लिए कम ब्याज दर, लंबी अवधि का कर्ज और कर्ज गारंटी जैसे सुविधाएं वैश्विक स्तर पर वित्तीय मदद के स्वीकार्य साधन हैं।

आमतौर पर अक्षय ऊर्जा निवेश को बढ़ावा देने में अनुदान और वित्तीय छूट की बड़ी भूमिका होती है, लेकिन भारत के कुल वित्त परिदृश्य में इनकी हिस्सेदारी काफी कम है। फिलहाल, छूट पर आधारित वित्त मुख्य तौर पर ट्रांसमिशन व वितरण नेटवर्क और छतों से जुड़े सौर ऊर्जा के लिए है। हरित ऊर्जा कॉरीडोर परियोजना के लिए कर्ज देने वाली जर्मनी का सस्ती ईकाई केएफडब्ल्यू; और छतों से जुड़ी सौर ऊर्जा परियोजनाओं के लिए विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक और नया विकास बैंक; और यूरोपीय निवेश बैंक (ईआईबी) कुछ ऐसे उदाहरण हैं, जो अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में वित्तीय पोषण का काम कर रहे हैं। भारत में इससे जुड़ा वित्तीय परिदृश्य मुख्य तौर पर इक्विटी और संपत्ति के बदले कर्ज पर आधारित है, क्योंकि अक्षय ऊर्जा की वित्तीय फंडिंग में निजी क्षेत्र का दबदबा है।

हालांकि, वेंचल कैपिटल (वीसी) और प्राइवेट इक्विटी निवेश में भी बढ़ोतरी हो रही है। हालांकि, इस बढ़ोतरी की रफ्तार थोड़ी धीमी है। साल 2017 के बाद से पवन ऊर्जा से जुड़ी कुछ कंपनियां अपने कामकाज के लिए फंड जुटाने में सफल रही हैं। हैदराबाद की स्वतंत्र ऊर्जा उत्पादक कंपनी ग्रीनको एनर्जी ने सिंगापुर के सोवरेन वेल्थ फंड जीआईसी और आबू धाबी निवेश प्राधिकरण के जरिय 15.5 करोड़ डॉलर जुटाए हैं। इसके अलावा, एक और स्वतंत्र विद्युत उत्पादक कंपनी हीरो फ्यूचर एनर्जीज़ ने अंतरराष्ट्रीय वित्त निगम (आईएफसी) और आईएफसी ग्लोबल इंफ्रास्ट्रक्चर फंड से पीई एक्सपैंशन कैपिटल के रूप में 12.5 करोड़ डॉलर जुटाए हैं। एक और कंपनी क्लीन मैक्स एनवायरो एनर्जी सॉल्यूशंस ने छतों से जुड़े सौर ऊर्जा अभियानों के लिए वारबर्ग पिनकस से 10.9 करोड़ डॉलर की रकम हासिल की है। इन कंपनियों के अलावा, आईआरईडीए ने ग्रीन मसाला बॉन्ड जारी कर 30 करोड़ डॉलर जुटाए हैं।

ऊर्जा क्षेत्र का वित्तीय परिदृश्य अहम बदलावों से गुज़र रहा है। कई मौकों पर अक्षय ऊर्जा की प्रतिस्पर्धा ऊर्जा की अन्य तकनीक के साथ देखने को मिलती है, ऐसे में वित्तीय बाजारों ने अक्षय ऊर्जा वित्त के मामले में बुनियादी बदलाव की दिशा में खुद को आगे बढ़ाना शुरू कर दिया है। अक्षय ऊर्जा के लिए जरूरी तत्काल बड़ी पूंजी और लागत की चुनौती से निपटने के लिए कम ब्याज दर, लंबी अवधि का कर्ज और कर्ज गारंटी जैसे सुविधाएं वैश्विक स्तर पर वित्तीय मदद के स्वीकार्य साधन हैं। इस संदर्भ में कहा जाए तो अक्षय ऊर्जा में ज्यादा से ज्यादा संस्थागत वित्त की सुविधाओं के लिए समेकित प्रयासों की जरूरत होगी। इस दिशा में बैंकिंग क्षेत्र को तैयार करना, अंतरराष्ट्रीय फंडिंग के विकल्प को तलाशना और तकनीकी और वित्तीय बाधाओं से निपटते हुए जोखिम करने या इसे साझा करने

के लिए उपयुक्त तंत्र विकसित करना चुनौती है। इससे जुड़ी गतिविधियों के प्रमुख क्षेत्रों के बारे में नीचे बताया गया है।

पहला, पेंशन और सोवरेन फंड अक्षय ऊर्जा के लिए स्थायी पूंजी के संभावित साधन हैं। टॉप 400 ग्लोबल फंड तकरीबन 75 लाख करोड़ डॉलर की संपत्तियों का प्रबंधन करते हैं। ग्रीन बॉन्ड जारी किए जाने का आंकड़ा 120 अरब डॉलर के पार जा चुका है। यहां तक इन फंडों का एक छोटा सा हिस्सा अक्षय ऊर्जा की एक दशक से भी ज्यादा की निवेश जरूरतों को आसानी से पूरा कर कर सकता है और इस तरह से कम जोखिम वाला सतत विकास सुनिश्चित हो सकता है और इससे हमारी धरती को हरा-भरा बनाए रखने में भी मदद मिलेगी। भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (सेबी) ने 2014 में इन्फ्रास्ट्रक्चर इनवेस्टमेंट ट्रस्ट्स (इन्वआईटी) की शुरुआत की थी। उद्योग जगत की इस पर प्रतिक्रिया यह रही कि 49 फीसदी सीमा के मौजूदा नियम के कारण इन्फ्रास्ट्रक्चर इनवेस्टमेंट ट्रस्ट्स (आधारभूत संरचना निवेश ट्रस्ट) ऐसी संपत्तियों वाले निवेश के वैकल्पिक ठिकानों के मुकाबले पर्याप्त रिटर्न देने में सक्षम नहीं है।

दूसरा, करेंसी हेजिंग लागत को घटाकर विदेशी कर्ज की लागत को कम करने से विदेशी पूंजी को इकट्ठा कर निवेश को बढ़ावा दिया जा सकता है। इससे अक्षय ऊर्जा मुहैया कराने की लागत कम हो सकेगी और जाहिर तौर पर यह ज्यादा प्रतिस्पर्धी हो सकेगी। 'क्लाइमेट पॉलिसी इनिशिएटिव' नामक संस्था के एक विश्लेषण के मुताबिक, किसी विदेशी मुद्रा हेजिंग केंद्र के जरिये 10 साल की करेंसी हेजिंग मुहैया कराने की अनुमानित लागत तकरीबन 3.5 प्रतिशत बिंदु (पर्सेंटेज प्वाइंट) सालाना होगी, जो मोटे तौर पर बाजार मूल्य से 50 फीसदी कम होगी।

तीसरा, मजबूत भुगतान सुरक्षा तंत्र (पीएसएम) भी निवेश को जोखिम से मुक्त करने में योगदान करेगा। कई अध्ययनों से इस बात की पुष्टि हुई है कि भारतीय अक्षय ऊर्जा से जुड़ा एक बड़ा जोखिम दूसरे पक्ष के कर्ज का जोखिम है, जो सरकारी ईकाइयों द्वारा बिजली उत्पादकों को वादे के मुताबिक भुगतान में देरी या पैसा नहीं देने से जुड़ा है। राज्य वितरण कंपनियों द्वारा बिजली की खरीद के लिए समयसीमा और विश्वसनीयता जैसी चीजें निवेश के लिहाज से जोखिम बनी हुई हैं। राष्ट्रीय सौर ऊर्जा मिशन ने वितरण कंपनी द्वारा भुगतान में अक्षम होने की स्थिति में डिवेलपर्स को भुगतान सुनिश्चित करने के लिए पीएसएम का प्रावधान किया है। बेहतर ढांचा वाला पीएसएम तैयार करने से जोखिम कम होता और जाहिर तौर पर निवेश का आकर्षण भी बढ़ता है।

इसका एक उदाहरण रेवा सौर पार्क परियोजना है, जहां शुल्क वसूली में छूट वाले फंडों और भुगतान सुरक्षा तंत्र की उपलब्धता की बड़ी भूमिका है और इस तरह से डिवेलपर्स का हित सुरक्षित रहता है। रेवा परियोजना में भुगतान सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए चार स्तरों वाली प्रणाली है, ताकि किसी भी देरी या प्राकृतिक आपदा की स्थिति में ट्रांसमिशन में बाधा पहुंचने पर भी डिवेलपर्स के भुगतान की गारंटी रहे। इस सुरक्षा तंत्र का पहला घेरा डीएमआरसी और एमबीबीएमसीएल जैसी इकाइयों की तरफ से मुहैया कराया गया लेटर ऑफ क्रेडिट है, जो डिवेलपर्स द्वारा पैदा की गई एक महीने की बिजली के बिल के बराबर है। दूसरा घेरा रेवा अल्ट्रा मेगा सोलर लिमिटेड (आरयूएमएस) द्वारा संचालित किया जाने वाले भुगतान सुरक्षा फंड है। इसमें बिजली खरीदने वाली इकाइयों की तरफ से भुगतान में गड़बड़ी होने पर तीन महीने के भुगतान का आश्वासन है। तीन महीने के भुगतान की यह गारंटी बिजली खरीदने वाली इकाइयों के एक महीना वाले लाइन ऑफ क्रेडिट में सबसे ऊपर है। तीसरा स्तर सरकार की गारंटी से जुड़ा है और इसके तहत अगर बिजली खरीदने वाली इकाइयों द्वारा भुगतान में देरी होती है तो बकाया राशि के भुगतान के लिए सरकार पहल करेगी। राज्य सरकार ने ट्रांसमिशन कटौती 50 घंटे से ज्यादा होने की स्थिति में लागत वहन करने पर सहमति जताकर चौथे स्तर पर भी भुगतान की सुरक्षा सुनिश्चित करने का प्रयास किया है। इन प्रावधानों को अब भुगतान संबंधी जोखिम कम करने का व्यापक मॉडल बताया जा रहा है।

चौथा, ज्यादातर द्विपक्षीय और बहुपक्षीय वित्तीय संस्थानों में ऐसे पारिस्थितिकी तंत्र की कमी है, जो पूरी तरह से अक्षय ऊर्जा की वित्तीय जरूरतों पर गौर करें। इसके अलावा, अक्षय ऊर्जा क्षेत्रों के लिए वित्तीय ढांचा बनाने की नीति को आगे बढ़ाते हुए बैंक अपने कर्ज से जुड़े फंड का एक निश्चित हिस्सा अक्षय ऊर्जा के लिए सुरक्षित कर सकते हैं। यह अक्षय ऊर्जा निवेश को तेजी से आगे बढ़ाने की दिशा में काफी अहम होगा।

अगर सही तंत्र विकसित कर लिया जाए, तो अक्षय ऊर्जा में निवेश के लिए फंड की कोई कमी नहीं है। भारत ने केंद्र और राज्य दोनों स्तरों पर कई प्रगतिशील नीतियां बनाई हैं। हालांकि, महत्वाकांक्षी लक्ष्य और लंबे समय के लिए पूंजी की जरूरत को देखते हुए वित्तीय चुनौतियां भी बनी रहेंगी। भारत दीर्घकालिक और छोटी अवधि वाले नीतिगत समाधान ढूंढने में जुटा हुआ है, जो इस दिशा में उठाया गया सही कदम है। अक्षय ऊर्जा के वित्त पोषण के नए तौर-तरीके, नई करेंसी हेजिंग सुविधाएं, सरकारी बॉन्ड आदि इस क्षेत्र में अतिरिक्त पूंजी आकर्षित करने और कर्ज की लागत करने में मददगार होंगी और इस तरह से भारत अक्षय ऊर्जा के अपने लक्ष्यों को हासिल कर सकेगा। ❑

अगर सही तंत्र विकसित कर लिया जाए, तो अक्षय ऊर्जा में निवेश के लिए फंड की कोई कमी नहीं है। भारत ने केंद्र और राज्य, दोनों स्तरों पर कई प्रगतिशील नीतियां बनाई हैं। हालांकि, महत्वाकांक्षी लक्ष्य और लंबे समय के लिए पूंजी की जरूरत को देखते हुए वित्तीय चुनौतियां भी बनी रहेंगी। भारत दीर्घकालिक और छोटी अवधि वाले नीतिगत समाधान ढूंढने में जुटा हुआ है, जो इस दिशा में उठाया गया सही कदम है। अक्षय ऊर्जा के वित्त पोषण के नए तौर-तरीके, नई करेंसी हेजिंग सुविधाएं, सरकारी बॉन्ड आदि इस क्षेत्र में अतिरिक्त पूंजी आकर्षित करने और कर्ज की लागत करने में मददगार होंगी और इस तरह से भारत अक्षय ऊर्जा के अपने लक्ष्यों को हासिल कर सकेगा।

ई-कचरा प्रबंधन

प्रौद्योगिकीय प्रगति और नवाचारों के कारण, इलेक्ट्रॉनिक्स उद्योग दुनिया का सबसे बड़ा और तेजी से उभरता विनिर्माण उद्योग बन गया है। बाज़ार में इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं की उपलब्धता ने विभिन्न कारणों से उपभोक्ताओं को अपनी मौजूदा इलेक्ट्रॉनिक्स वस्तुओं को नये मॉडल में बदलने का प्रलोभन बढ़ा दिया है। कुल मिलाकर तेज़ी से प्रचलन से बाहर होती इलेक्ट्रॉनिक्स वस्तुओं के कारण ई-कचरे के ढेर बढ़ते जा रहे हैं।

इलेक्ट्रानिक कचरे में इलेक्ट्रॉनिक्स/इलेक्ट्रिक वस्तुओं के अपशिष्ट शामिल होते हैं जो कि उनके मूल रूप में उपयोग किये जाने के योग्य नहीं होते हैं अथवा वे अपने जीवन के अंत तक पहुंच गये हैं। इनमें रेफ्रीजिरेटर और एअर कंडीशनर जैसी वस्तुओं के अलावा मोबाईल फोन, कम्प्यूटर, मॉनीटर, कैलकुलेटर्स, सीडी, प्रिंटर, स्कैनर, कोपियर, बैटरी सैल, रेडियो, टेलीविजन, चिकित्सा उपकरण और इलेक्ट्रॉनिक हिस्से पुर्जे जैसी वस्तुएं शामिल हो सकती हैं।

यद्यपि ई-कचरा अपने आप में हानिकारक नहीं होता है, परंतु उनके उपकरणों और यंत्रों में खतरनाक पदार्थ होते हैं। ई-कचरे में तांबा, चांदी, सोना और प्लेटिनम जैसी मूल्यवान सामग्रियां होती हैं जिन्हें प्राप्त करने के लिये प्रोसेस किया जा सकता है। जब ऐसे कचरे को विनष्ट और प्रोसेस किया जाता है, ऐसे में वे स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिये खतरा उत्पन्न करते हैं।

इलेक्ट्रानिक्स और इलेक्ट्रिकल उपकरण कार्यकुशल और पर्यावरण अनुकूल पाये जाते हैं, परंतु इनसे जुड़ा छिपा हुआ खतरा उस वक्त उजागर होता है जब वे ई-कचरे में तबदील हो जाते हैं। इलेक्ट्रानिक्स उत्पादों में मौजूद हानिकारक सामग्रियां और प्रौद्योगिकीय सुधार के कारण पुरानी पड़ गई इकाइयों को बदलने से वे उस वक्त मानव स्वास्थ्य के लिये ख़तरा बन जाते हैं, जब इलेक्ट्रॉनिक्स उत्पादों का निपटान से पूर्व सही तरह से प्रसंस्करण नहीं किया जाता है।

कुछ इलेक्ट्रॉनिक और इलेक्ट्रिकल उपकरणों में मौजूद भारी धातु जैसे कि सीसा, बेरियम और कैडमियम यदि पानी की प्रणालियों में प्रवेश कर जायें तो वे स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकारक हो सकते हैं। ये सामग्री मानव तंत्रिका और श्वसन तंत्र को नुकसान पहुंचा सकती हैं।

भारत दुनिया में मोबाईल फोनों का सबसे बड़ा उपभोक्ता है जहां हर वर्ष 1.5 मिलियन टन से अधिक ई-कचरे का निर्माण होता है और ज़्यादातर उपभोक्ताओं को अब भी इस बात की जानकारी नहीं है कि उन्हें अपने ई-कचरे का निपटन कैसे करना है। ई-कचरे की री-साइक्लिंग (पुनर्चक्रण) का काम पूरी तरह लगभग अनौपचारिक क्षेत्र पर छोड़ दिया गया है, जिसके पास इसकी बढ़ती मात्रा से निपटने के पर्याप्त तौर तरीके अथवा प्रक्रियाएं नहीं हैं, जिसके कारण मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिये असहनीय जोखिम उत्पन्न हो गया है।

ई-कचरे के बारे में 2011 में पहली बार कानून पारित किया गया था। यह विस्तारित निर्माण उत्तरदायित्व (ईपीआर) पर आधारित था, जिसमें उत्पादकों पर राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों के साथ मिलकर अपने उत्पाद के जीवन के अंतिम चरणों के प्रबंधन के लिये एक पारिस्थितिकी अनुकूल तरीकों के प्रबंधन हेतु कुछ मानक बनाये गये। प्रमुख बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिये हार्डवेयर और साफ्टवेयर हेतु इलेक्ट्रानिक्स विनिर्माण सुविधाओं तथा अनुसंधान एवं विकास केंद्रों की स्थापना करना अनिवार्य किया गया है। ई-कचरा (प्रबंधन) नियम, 2016, जिसे 1 अक्तूबर, 2017 में लागू किया गया था, से मौजूदा नियमों को मज़बूती मिली है। वर्तमान नियम से विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ईपीआर) को मज़बूती मिली है, जो कि उत्पाद के जीवन के अंत में वापसी सुनिश्चित करने का एक सर्वोत्कृष्ट वैश्विक व्यवहार है। विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ईपीआर) को और मज़बूती प्रदान करने के लिये 'उत्पादक उत्तरदायित्व संगठन' (पीआरओ) के नाम से एक नई व्यवस्था शुरू की गई है। पीआरओ, एक पेशेवर संगठन को उत्पादकों द्वारा ई-कचरे के संग्रह और संचालन की ज़िम्मेदारी हेतु अधिकृत किया जायेगा अथवा उसका सामूहिक या व्यक्तिश: वित्तपोषण किया जायेगा।

इसके अलावा, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी) हानिकारक पदार्थों पर प्रतिबंध से संबंधित कानून की अनुपालना की की जांच के लिये बाज़ार में रखे गये इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रानिक उपकरणों के औचक नमूने प्राप्त करेगा और नमूनों का संग्रह करने तथा परीक्षण से संबंधित लागत उत्पादक द्वारा वहन की जायेगी। औचक नमूने केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के दिशानिर्देशों के अनुसार प्राप्त किये जायेंगे। यदि उत्पाद उत्पादक उत्तरदायित्व संगठन (आरओएचएस) के प्रावधानों के अनुरूप नहीं होता है, उत्पादक उस उत्पाद को सीपीसीबी के दिशानिर्देशों के अनुसार एक न्यायसंगत अवधि में नियमों की अनुपालन के अनुरूप बनाने के लिये सुधारात्मक कदम उठायेंगे, और बाज़ार से उत्पाद को हटा लेंगे अथवा वापस कर लेंगे। □

सौर संभावनाओं को हासिल करने के उपाय

सुमंत सिन्हा

भारत की विशाल आबादी की जरूरतें भी तेजी से बढ़ रही हैं। हालांकि, संसाधनों का जस का तस बने रहना तेज रफ्तार वाली अर्थव्यवस्था की बढ़ रही मांगों को पूरा करने के लिए शायद पर्याप्त नहीं हो। उदाहरण के लिए हम ऊर्जा क्षेत्र की बात करते हैं। देश में बिजली की प्रति व्यक्ति की खपत 1,100 किलोवाट सालाना है, जो अमेरिका और चीन जैसी विकसित अर्थव्यवस्थाओं के मुकाबले काफी कम है। शहरीकरण और औद्योगिक विकास की बढ़ती दरों के साथ बिजली की मांग में भी तेजी निश्चित है। ऊर्जा के क्षेत्र में क्षमता को बढ़ाकर मांग-आपूर्ति के इस अंतर को दूर करना नीति निर्माताओं के लिए प्राथमिकता सूची में ऊपर है।

दुर्भाग्य से ऊर्जा उत्पादन के हमारे पारंपरिक साधन पहले ही अपने अधिकतम स्तर के आसपास पहुंच गए हैं। पेरिस समझौते के मुताबिक, भारत को भी ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को रोकने के लिए अपने वादे को जरूर पूरा करना चाहिए। इसका मतलब यह है कि हमें जीवाश्म ईंधन आधारित विकास के रास्ते से अलग हटने की जरूरत है। जाहिर तौर पर हमें वैकल्पिक उपायों की तरफ देखने की जरूरत है, ताकि हम कार्बन के स्तर में कटौती के साथ स्वच्छ तरीके से ऊर्जा सुरक्षा की चुनौती से निपट सकें। कई विकसित देशों का अनुभव बताता है कि अक्षय ऊर्जा को अपनाना ही भविष्य में इस सिलसिले में एकमात्र विकल्प होगा। निश्चित तौर पर भारत को भी विकास के पथ पर ऊर्जा के इस माध्यम को अपनाने की जरूरत है। देश में अक्षय ऊर्जा, विशेष रूप में सौर ऊर्जा के साधन की जबरदस्त संभावना है। दरअसल, तकरीबन पूरे देश में साल भर प्रचुर

लेखक रिन्यू पावर के चेयरमैन और प्रबंध निदेशक हैं। ईमेल: sumant@renewpower.in

मात्रा में धूप उपलब्ध होती है।

भारत सरकार ने साल 2022 तक 175 गीगावाट अक्षय ऊर्जा की क्षमता हासिल करने का लक्ष्य रखा है। इसमें सबसे ज्यादा हिस्सेदारी यानि 100 गीगावाट सौर ऊर्जा के लिए तय की गई है। सरकार का काफी ध्यान इस क्षेत्र पर है। इस क्षेत्र में ज्यादा से ज्यादा खिलाड़ियों को आकर्षित करने या और क्षमता बढ़ाने के लिए कई कदम उठाए गए हैं। नतीजतन, पिछले कुछ साल में हम पहले ही 28 गीगावाट सौर ऊर्जा क्षमता हासिल कर चुके हैं, जबकि इससे जुड़ा सीएजीआर 55 फीसदी है। अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन को शुरू करना इस क्षेत्र को मजबूत बनाने की दिशा में अहम कदम था। सौर पार्कों के गठन, वायबिलिटी गैप फंडिंग संबंधी मदद, और कुसुम (कृषि के लिए सौर ऊर्जा क्षमता के इस्तेमाल का मकसद) और सृष्टि (छत पर सौर ऊर्जा प्रणाली से संबंधित) जैसी योजनाओं की पेशकश के जरिये सरकार ने सौर उद्योग की रफ्तार को तेज करने को लेकर उत्सुकता दिखाई है। हालांकि, भारत में सौर ऊर्जा की संभावनाओं को पूरी तरह से हासिल करने के लिए सामारिक स्तर पर और उपाय किए जाने की जरूरत है और 2022 तक 100 गीगावाट की सौर ऊर्जा क्षमता का महत्वाकांक्षी लक्ष्य के करीब पहुंचने के लिए जमीनी स्तर पर व्यापक काम करने की जरूरत है। भारत में सौर ऊर्जा उद्योग को अगले स्तर पर ले जाने के लिए यहां 5 ऐसे क्षेत्रों के बारे में बताया जा रहा है, जिस पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है।

पेरिस समझौते के मुताबिक, भारत को भी ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को रोकने के लिए अपने वादे को जरूर पूरा करना चाहिए। इसका मतलब यह है कि हमें जीवाश्म ईंधन आधारित विकास के रास्ते से अलग हटने की जरूरत है। जाहिर तौर पर हमें वैकल्पिक उपायों की तरफ देखने की जरूरत है, ताकि हम कार्बन के स्तर में कटौती के साथ स्वच्छ तरीके से ऊर्जा सुरक्षा की चुनौती से निपट सकें। कई विकसित देशों का अनुभव बताता है कि अक्षय ऊर्जा को अपनाना ही भविष्य में इस दिशा में एकमात्र विकल्प होगा।

तकनीक

भारत में सौर ऊर्जा देश की ऊर्जा जरूरतों का प्रमुख क्षेत्र बनकर उभर रहा है, लेकिन अभी भी इस सिलसिले में बड़ी खाई को पाटा जाना बाकी है। उदाहरण के तौर पर छत पर मौजूद रहने वाली सौर ऊर्जा वाली प्रणाली में बड़े स्तर पर क्षमता बढ़ाई जा सकती है, लेकिन इसके लिए संबंधित राज्य सरकारों से सहयोग जरूरी है। इस क्षेत्र में नई-नई तकनीक, मसलन फ्लोटिंग सोलर और बीआईपीवी (भवन की छतों और आवरण के लिए इस्तेमाल की गई पारंपरिक सामग्री के बदले फोटोवोलटइक सिस्टम का विकल्प) सौर ऊर्जा संबंधी क्षमताओं को बढ़ाने में अहम भूमिका निभा सकते हैं। इस क्षेत्र में बड़ी संभावना को देखते हुए सरकार और निजी इकाइयां, दोनों को शोध और विकास पर जोर देकर इसके लिए जरूरी मदद मुहैया कराना चाहिए और इस क्षेत्र से जुड़ी नई तकनीक और नवाचार को तेजी से अपनाना चाहिए। इससे न सिर्फ इसके लिए भविष्य की दिशा तय करने में मदद मिलेगी, बल्कि इसकी लागत को भी कम करना मुमकिन हो सकेगा। जाहिर तौर पर ऊर्जा के इस माध्यम को अपनाने की प्रक्रिया तेज होगी।

नीतिगत समर्थन

तकनीकी विकास और सरकार की नीति के कारण पिछले कुछ साल में सौर ऊर्जा की दरों में कमी आई है और इस तरह से ऊर्जा के इस माध्यम की पहुंच आम लोगों तक बढ़ी है। हालांकि, हाल के वर्षों में सौर ऊर्जा संबंधी दरों का मार्जिन कम हुआ है, जिससे मुनाफा भी कम हुआ है। इसकी दरें ऊर्जा के अन्य साधनों के मुकाबले बेहद कम हैं और इसे देखते हुए बेहतर दरों की दिशा में आगे बढ़ने की जरूरत है, ताकि इस क्षेत्र के नए खिलाड़ियों के लिए टिकाऊ कारोबारी मॉडल बन सके और इसमें पूंजी निवेश बढ़ने की राह आसान हो सके। इससे आखिरकार आपूर्ति में बढ़ोतरी होगी और आम आदमी के लिए कीमतें भी कम होंगी। संबंधित राज्य सरकारों को क्षमता में नियमित बढ़ोतरी के साथ सौर ऊर्जा उत्पादन की दर के बारे में बताना चाहिए।

डिस्कॉम (वितरण कंपनियों) की आर्थिक हालत

विद्युत वितरण कंपनियों की स्थिति सुधारने के लिए सरकार की पहल के बावजूद पिछले कुछ वर्षों में राज्य विद्युत वितरण कंपनियों की स्थिति में सुधार नहीं हुआ है। ये वितरण कंपनियां ऊर्जा उत्पादन के चक्र में अहम कड़ी हैं और पूरी प्रक्रिया में इनका असर है। अतः, वितरण कंपनियों

भू-ताप और समुद्री ऊर्जा तकनीक

अनुभव उप्पल

स्वस्थ धरा की अपनी वचनबद्धता और जलवायु परिवर्तन के बारे में पेरिस समझौते में राष्ट्र द्वारा तय किये गये योगदान को ध्यान में रखते हुए भारत ने एक संकल्प लिया है कि 2030 तक देश की कुल संस्थापित विद्युत उत्पादन क्षमता में से 40 प्रतिशत स्वच्छ ऊर्जा स्रोतों से प्राप्त हाने लगेगी। इसी के अनुसार देश में सन् 2022 तक 175 गीगावाट की संस्थापित विद्युत उत्पादन क्षमता नवीकरणीय स्रोतों से प्राप्त करने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसमें से 100 गीगावाट सौर ऊर्जा से, 60 गीगावाट पवन ऊर्जा से, 10 गीगावाट जैव-विद्युत और 5 गीगावाट लघु पनबिजली घरों से प्राप्त होगी। आज की तारीख में देश में करीब 77 गीगावाट नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादन क्षमता प्राप्त कर ली गयी है जिसका काफी बड़ा हिस्सा सौर और पवन ऊर्जा टेक्नोलाजी से प्राप्त होगा। इसके अलावा नयी और उभरती हुई ऊर्जा टेक्नालाजी जैसे फ्लोटिंग सोलर, समुद्र तटीय पवन, सौर-पवन हाइब्रिड और ऊर्जा भंडारण जैसी टेक्नोलाजी की उपयोग की संभावनाओं का भी पता लगाया जा रहा है। बहरहाल, नवीकरणीय ऊर्जा टेक्नालाजी जैसे भू-तापीय और समुद्री व महासागर ऊर्जा टेक्नोलाजी अभी अपने विकास के प्रारंभिक चरण में ही है।

समुद्र/महासागर ऊर्जा

धरती की सतह के 70 प्रतिशत में समुद्र और महासागर फैले हुए हैं और ये नवीकरणीय ऊर्जा के अक्षय स्रोत हैं। इनकी लहरों, ज्वार-भाटे और इनमें बहने वाली धाराओं और पानी के तापमान व लवणता में अंतर से प्राप्त की जाने वाली ऊर्जा को समुद्री या महासागर ऊर्जा कहा जाता है। दुनिया में समुद्र और महासागर की इस ऊर्जा का वाणिज्यिक दोहन करने के लिए अब तक कुछ ही विद्युत संयंत्र स्थापित किये जा सके हैं। 2016 के अंत तक विश्व में करीब 536 मेगावाट संस्थापित क्षमता के ऐसे ही संयंत्रों से बिजली का उत्पादन किया जा रहा था जिनमें से ज्वार-भाटे से बड़े पैमाने पर बिजली पैदा करने वाले दो प्रमुख संयंत्र (दक्षिण कोरिया में 2011 में स्थापित 254 मेगावाट क्षमता का शिहवा संयंत्र और फ्रांस में 1966 में स्थापित 240 मेगावाट क्षमता का ला रान्स) भी शामिल थे। ज्वार भाटे के पानी को बैराज में रोककर टाइडल टर्बाइन टेक्नोलाजी से विद्युत उत्पन्न करने के अलांवा समुद्री ऊर्जा के दोहन की अन्य टेक्नोलाजी अभी विकास की दृष्टि से अब भी वाणिज्यिक उपयोग से पहले की अवस्था में ही पहुंच पायी हैं।

वैश्विक परिदृश्य

समुद्री ऊर्जा के दोहन की टेक्नोलाजी के क्षेत्र में प्रमुख देशों में ब्रिटेन, अमेरिका, स्वीडन, कैनेडा, फ्रांस और दक्षिण कोरिया शामिल हैं। ज्वार भाटे की लहरों को बैराज में रोककर बड़े पैमाने पर बिजली पैदा करने वाले देशों में दक्षिण कोरिया प्रमुख है जहां इससे 254 मेगावाट विद्युत उत्पादन होता है। इसके बाद फ्रांस में 240 मेगावाट (1966) और कनाडा में 20 मेगावाट बिजली समुद्री लहरों से पैदा की जाती है। ज्वार धाराओं, समुद्री लहरों और समुद्री ताप ऊर्जा से विद्युत उत्पादन के क्षेत्र में कार्य अभी अनुसंधान

> हाल के वर्षों में दुनिया में भू-तापीय ऊर्जा के क्षेत्र में मामूली प्रगति हुई है जबकि इसकी तुलना में अन्य नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों खास तौर पर पवन या सौर ऊर्जा ने अच्छी प्रगति की है। इसका कारण इसका स्थान विशेष के लिए सीमित होना, संसाधनों का पता लगाने में जोखिम/अनिश्चितता होना और ऊंची पूंजी लागत का होना शामिल है

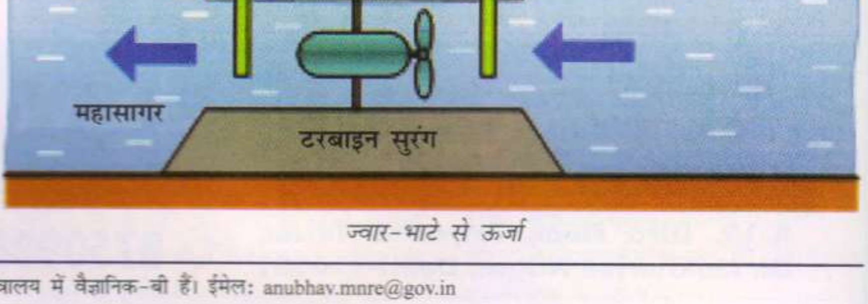

ज्वार-भाटे से ऊर्जा

लेखक भारत सरकार के नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय में वैज्ञानिक-बी हैं। ईमेल: anubhav.mnre@gov.in

और विकास से पहले की अवस्था में है यानी इनसे अभी बहुत कम बिजली उत्पादन (किलोवाट स्तर पर) हो रहा है।

भारतीय परिदृश्य

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) मद्रास के अध्ययन के अनुसार भारत में समुद्री ज्वार से विद्युत उत्पादन की क्षमता सैद्धांतिक रूप में 12,500 मेगावाट है। इसके लिए उपयुक्त स्थानों में गुजरात में खम्बात की खाड़ी और कच्छ की खाड़ी, पश्चिम बंगाल में सुंदरवन, महाराष्ट्र में पश्चिमी घाट आदि शामिल हैं। भारत में समुद्री लहरों से विद्युत उत्पादन की सैद्धांतिक क्षमता 41,000 मेगावाट है और इसके लिए उपयुक्त पाये गये स्थानों में महाराष्ट्र के पश्चिमी घाट, गोवा, कर्नाटक, केरल और भारत का दक्षिणी छोर कन्याकुमारी आदि शामिल हैं। लेकिन वास्तविक क्षमता के आकलन और पुष्टि के लिए इन स्थानों पर संसाधन सर्वेक्षण कराया जा सकता है। ये टेक्नोलाजी दूर-दराज के तटवर्ती इलाकों/कछारी इलाकों/द्वीपों में ऑफ ग्रिड विद्युत उत्पादन के लिए ज्यादा उपयुक्त है जहां डीजल से चलने वाले जनरेटर से बिजली की लागत 25 रुपया प्रति किलोवाट तक आती है जो बहुत अधिक है। लेकिन समुद्र की लहरों से विद्युत उत्पादन करने वाले संयंत्र स्थापित करने में सबसे बड़ी बाधा प्रारंभिक लागत का बहुत अधिक होना है। उदाहरण के लिए अंडमान-निकोबार द्वीप समूह में समुद्री लहरों से विद्युत उत्पादन करने वाले 1.125 मेगावाट क्षमता के संयंत्र की लागत 60 करोड़ रुपये आयी जबकि भारतीय नौसेना के 8 मेगावाट संयंत्र को लगान में 2000 करोड़ रुपये खर्च हुए। इनका विद्युत प्रभार भी 15.69 रुपया प्रति किलोवाट रहा जबकि अंडमान-निकोबार में समुद्री लहरों से ऊर्जा पैदा करने वाले संयंत्र के संचालन के लिए 50 प्रतिशत अनुदान भी दिया जाता है।

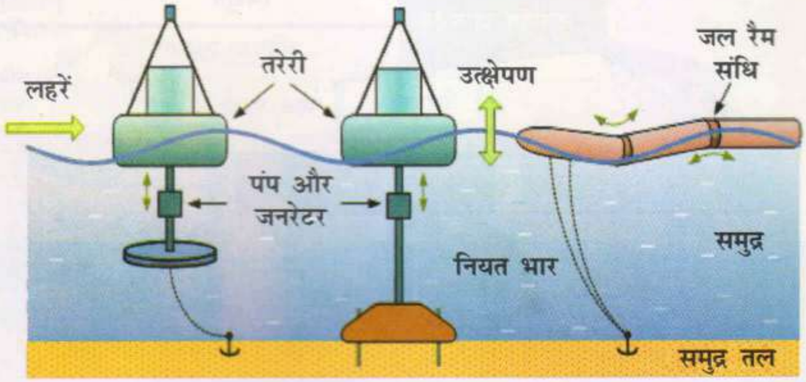

लहर ऊर्जा परिवर्तक

टेक्नालाजी

क. ज्वार भाटे से ऊर्जा

चंद्रमा के गुरुत्वाकर्षण के कारण ज्वार-भाटे का चक्र 12 घंटे के अंतराल से पैदा होता है। उच्च ज्वार से निम्न ज्वार के बीच पानी के स्तर में अंतर स्थितिज ऊर्जा की वजह से होता है जिसका उपयोग किया जा सकता है। जिस तरह से बांधों से बिजली पैदा की जाती है उसी तरह से मुहाने के पास बैराज बनाकर समुद्री ज्वार के पानी को इसमें इकट्ठा कर लिया जाता है और ज्वार के उतरते समय इस पानी से टरबाइन चलाकर बिजली पैदा की जाती है। ज्वार-भाटे की ऊर्जा पर आधारित बिजलीघरों की पूंजी लागत निर्माण में होने वाले भारी खर्च के कारण बहुत ज्यादा बैठती है जिससे इस तरह पैदा हुई बिजली की उत्पादन लागत भी बहुत ऊंची हो जाती है। ज्वार-भाटे की ऊर्जा से बिजली उत्पादन करने के लिए ज्वार के समय समुद्र सतह ऊंचाई भाटे के समय की ऊंचाई से कम से कम 5 मीटर अधिक होना आवश्यक है।

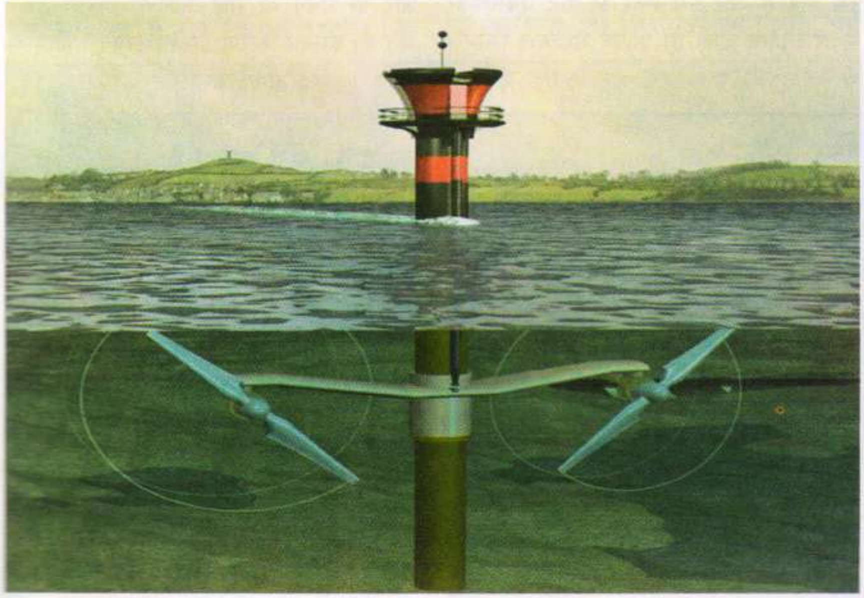

समुद्री लहरों से चालित टर्बाइन

ख. समुद्री लहरों से ऊर्जा

लहरों से ऊर्जा का उत्पादन समुद्र की सतह पर तैरती वस्तु के चलने या समुद्र तल पर स्थापित उपकरण पर समुद्री लहरों द्वारा उत्पन्न दबाव से किया जाता है। लहरों की ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलने के लिए विभिन्न प्रकार की कई तकनीक इस्तेमाल की जाती हैं। समुद्री लहरों की ऊर्जा से बिजली तैयार करने में प्रयुक्त उपकरण सतह पर तैरता रहता है। इसमें कब्जों के जरिए दूसरे हिस्से जुड़े रहते हैं जो लहरों के साथ-साथ गति करते हैं। गतिज ऊर्जा के कारण पानी दबाव के साथ टर्बाइन पर पड़ता है जिससे बिजली पैदा होती है। समुद्र तल पर स्थापित उपकरण से बिजली पैदा करने वाली युक्ति में ऊपर-नीचे की ओर पैदा हुए लहरों के दबाव से बिजली पैदा की जाती है। लम्बी ट्यूबों में लहरों के दबाव को निर्देशित कर इसके उतार-चढ़ाव से टर्बाइन को चलाकर विद्युत उत्पादन किया जाता है।

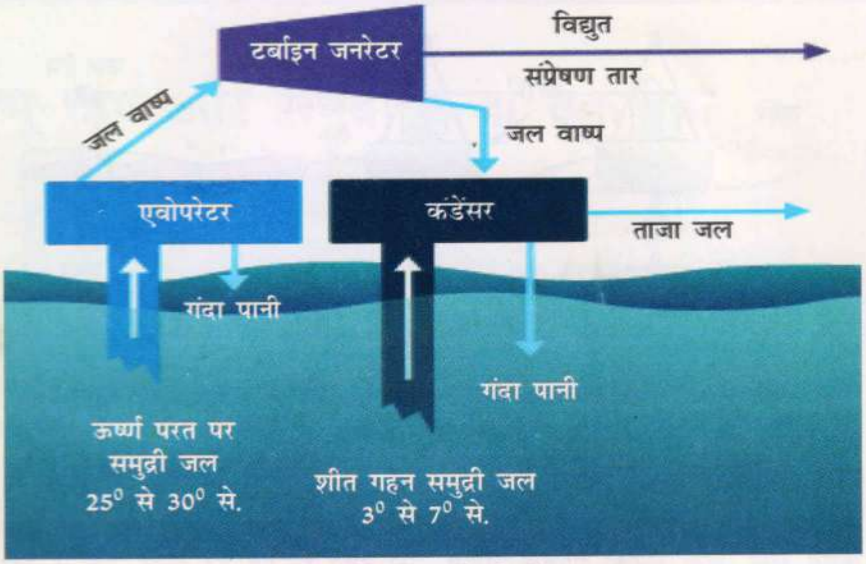

समुद्री ताप ऊर्जा परिवर्तक

ग. धारा ऊर्जा

समुद्र और महासागरों में एक ही दिशा में बहते पानी को धारा कहा जाता है। इस तरह की समुद्री धाराओं को गल्फ स्ट्रीम भी कहा जाता है। इस तरह की विभिन्न समुद्री धाराओं की गतिज ऊर्जा का उपयोग करके पानी में डूबे टर्बाइन को चलाया जाता है। धारा के दबाव से रोटर के पंखे चलने लगते हैं जिससे बिजली पैदा होती है। यह युक्ति पवन ऊर्जा उत्पन्न करने वाले टर्बाइन से मिलती-जुलती है।

घ. समुद्री ताप ऊर्जा रूपांतरण (ओटीईसी)

समुद्री ताप ऊर्जा रूपांतरण या (ओटीईसी) में समुद्र की सतह और 1000 मीटर से अधिक की गहराई में तापमान में अंतर का उपयोग करके ऊर्जा उत्पन्न की जाती है। तापमान में 20 डिग्री सेल्सियस का अंतर होने पर दक्षता के साथ बिजली उत्पादन किया जा सकता है। अनुसंधान में दो तरह की ओटीईसी टेक्नालाजी पर ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है जिन्हें क्लोज्ड साइकिल और ओपन साइकिल टेक्नोलाजी कहा जाता है।

समुद्री ताप ऊर्जा कनवर्टर

क्लोज्ड साइकल विधि में किसी द्रव जैसे अमोनिया हीट एक्सचेंजर के जरिए पम्प करके वाष्प रूप में प्राप्त कर लिया जाता है और इससे टर्बाइन को चलाया जाता है। समुद्र की गहराई में पाया जाने वाला ठंडा पानी इस वाष्प को वापस तरल अवस्था में ला देता है और इसे फिर से हीट एक्सचेंजर में भेज दिया जाता है। ओपन साइकल सिस्टम में सतह के गर्म पानी पर निर्वात कक्ष में दबाव डालकर भाप में परिवर्तित कर दिया जाता है और इसके बाद इससे टर्बाइन चलाई जाती है। इसके बाद भाप को गहराई में पाये जाने वाले समुद्र के ठंडे पानी से संघनित कर लिया जाता है।

भविष्य की रूपरेखा

दुनिया भर में आज अधिकतम समुद्री टेक्नोलाजी अनुसंधान और विकास/वाणिज्यिक उपयोग के प्रारंभिक चरण में हैं। इसलिए टेक्नोलाजी का उपयोग करने से पहले इनका प्रमुख अनुसंधान संस्थानों द्वारा सत्यापन होना जरूरी है। शुरू में वाणिज्कि संयंत्र स्थापित करने से पहले प्रायोगिक परियोजनाएं बनाना भी जरूरी है जिसके साथ-साथ महासागर ऊर्जा के दोहन में विशेषज्ञता रखने वाले देशों से मदद लेकर संसाधनों का मूल्यांकन कराना आवश्यक है।

भू-ताप ऊर्जा

भू-तापीय ऊर्जा परिपक्व नवीकरणीय ऊर्जा टेक्नोलाजी है जिसमें विद्युत उत्पादन और इमारतों को गर्म या ठंडा रखने के लिए स्वच्छ और विश्वसनीय ऊर्जा उपलब्ध कराने की क्षमता है। भू-तापीय ऊर्जा का उपयोग विद्युत उत्पादन के साथ साथ मकानों को गर्म रखने, घरेलू/औद्योगिक उपयोग के लिए गर्म पानी उपलब्ध कराने, शीत भंडार चलाने, बागवानी आदि में किया जा सकता है। लेकिन हाल के वर्षों में दुनिया में भू-तापीय ऊर्जा के क्षेत्र में मामूली प्रगति हुई है जबकि इसकी तुलना में अन्य नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों खास तौर पर पवन या सौर ऊर्जा ने अच्छी प्रगति की है। इसका कारण इसका स्थान विशेष के लिए सीमित होना, संसाधनों का पता लगाने में जोखिम/अनिश्चितता होना और ऊंची पूंजी लागत का होना शामिल है।

विश्व परिदृश्य

दुनिया में भू-तापीय बिजली की कुल संस्थापित क्षमता करीब 13.5 गीगावाट है। इस क्षेत्र में अग्रणी देशों में अमेरिका (3600 मेगावाट), फिलिप्पीन्स (1900 मे.वा.), इंडोनेशिया (1600 मे.वा.), न्यूजीलैंड (1000 मे.वा.), मेक्सिको (900 मे.वा.), इटली (800 मे.वा.), तुर्की (800 मे.वा.), आइसलैंड (700 मे.वा.), केन्या (600 मे.वा.) और जापान (500 मे.वा.) शामिल हैं। भू-तापीय ऊर्जा का मकानों को गर्म/ठंडा करने में सीधा उपयोग करने (हीट पम्प को

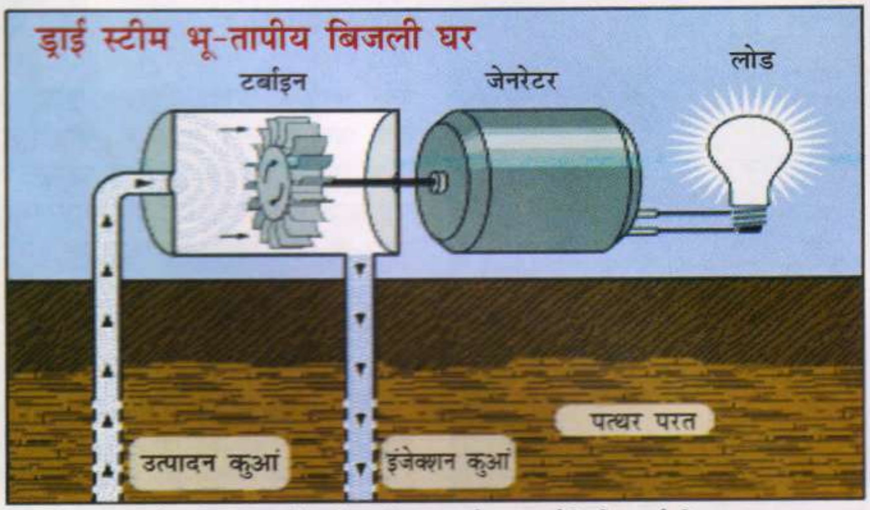

ड्राई स्टीम भू-तापीय बिजली घर (स्रोत : अमेरिकी ऊर्जा विभाग)

जीडब्लूटीएच) की कुल संस्थापित क्षमता करीब 23 जीडब्लूटीएच है। ऐसा करने वाले प्रमुख देशों में चीन (6.1 जीडब्लूटीएच), तुर्की (2.9 जीडब्लूटीएच), जापान)(2.1 जीडब्लूटीएच) और इटली (1.4 जीडब्लूटीएच) शामिल हैं। ग्राउंड सोर्स हीट पम्पों (जीएसएचपी) की कुल संस्थापित क्षमता 50.3 जीडब्लूटीएच है और अमेरिका, चीन और यूरोप (फ्रांस, जर्मनी, इटली और स्वीडन) हैं।

भारतीय परिदृश्य

भू-तापीय ऊर्जा के उपयोग के क्षेत्र में भारत अभी प्रारंभिक अवस्था में है और अभी तक देश में कोई भू-तापीय बिजलीघर स्थापित नहीं हुआ है। इसका कारण यह है कि ऐसे बिजलीघरों की स्थापना की निर्माण लागत 30 करोड़ रुपया प्रति मेगावाट है और अनुमानित प्रभार 10 रुपया प्रति किलोवाट आवर आता है। इसका उत्पादन किसी खास स्थान पर ही किया जा सकता है और इसके लोड सेंटर भी नहीं होते। इसमें उत्पादित ऊर्जा को दूसरे स्थान तक भेजने की सुविधा नहीं है और इसके दोहन में भारी जोखिम की भी आशंका रहती है। भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण ने 1970 और 1980 के दशकों में वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद के राष्ट्रीय भू-भौतिक अनुसंधान संस्थान (एनजीआरआई) के साथ मिलकर भू-तापीय संसाधनों की खोज और उनके उपयोग के लिए प्राथमिक संसाधन मूल्यांकन कराया। भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण द्वारा की गयी प्रारंभिक जांच के अनुसार देश में करीब 300 भू-तापीय गर्म जल स्रोत हैं। ये सब मध्यम क्षमता (100 सी से 200 सी) और निम्न क्षमता (100 सी से कम) वाले इलाकों में हैं। भू-तापीय विद्युत उत्पादन के संभावनाओं वाले स्थानों में जम्मू-कश्मीर में पूगा घाटी और चुम्माथांग, गुजरात में खम्बात, छत्तीसगढ़ में तातापानी, तेलंगाना में खम्माम और महाराष्ट्र में रत्नगिरि शामिल हैं। ताप ऊर्जा के सीधे इस्तेमाल की संभावना वाले भू-तापीय स्रोतों में बिहार में राजगीर, हिमाचल प्रदेश में मणिकरण, झारखंड में सूरजकुंड, उत्तराखंड में तपोवन और हरियाणा में सोहना इलाका शामिल हैं।

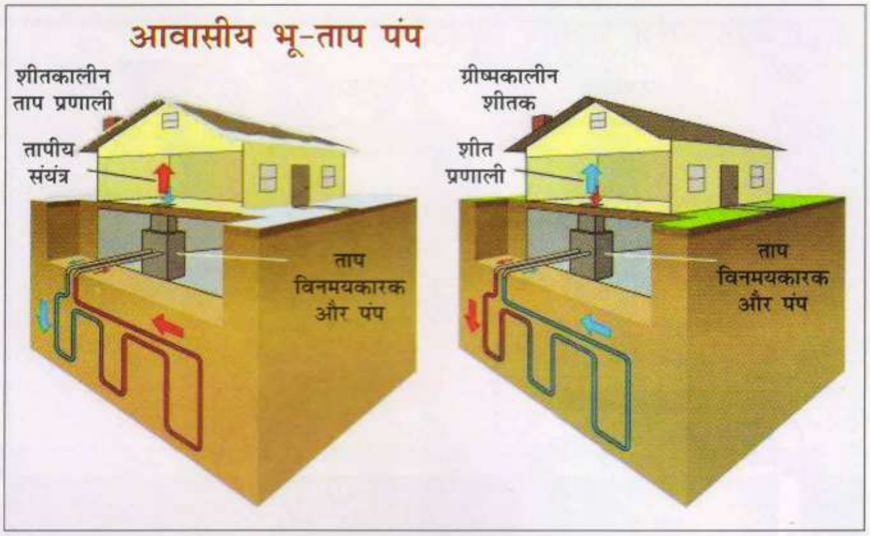

आवासीय भू-ताप पंप (स्रोत : एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका)

टेक्नोलाजी

विद्युत उत्पादन : गर्म पानी और धरती के भीतर गहराई वाले क्षेत्र से उत्पन्न गर्म जल और भाप को भूमिगत कुंओं से ऊपर निकाला जा सकता है और इसका उपयोग बिजली घरों में विद्युत उत्पादन में किया जा सकता है। भू-तापीय बिजली घर तीन तरह के होते हैं:

1. **ड्राई स्टीम संयंत्र** में भू-तापीय ऊर्जा का उपयोग सीधे तौर पर किया जाता है। ड्राई स्टीम पावर प्लांट्स में जीओताप रिजवॉयर की बेहद गर्म भाप (235 डिग्री सेल्सियस से अधिक) का उपयोग किया जाता है। भाप को सीधे एक पाइप के जरिए टर्बाइन को भेजा जाता है जिससे जेनेरेटर चलता है और बिजली पैदा होती है।

2. **फ्लैश स्टीम संयंत्र** में भू-तापीय जलक्षेत्र उच्च दबाव वाले गर्म पानी का उपयोग भाप बनाने में किया जाता है। इस तरह के बिजलीघरों में गर्म पानी (182 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा) का उपयोग किया जाता है। पानी को जेनेरेटर में भेज दिया जाता है और इसे ऊंचे दबाव के साथ गहरे रिजर्वायर में छोड़ा जाता है। दबाव में अचानक गिरावट आने से कुछ पानी वाष्पीकृत होकर भाप में बदल जाता है। इस भाप को टर्बाइन चलती है और विद्युत उत्पादन संभव हो पाता है। जो पानी भाप में नहीं बदल पाता वह इंजेक्शन वैल के जरिए वापस भू-तापीय रिजर्वायर में पहुंच जाता है।

3. **दोहरे चक्र वाले संयंत्र** में भू-ताप जलाशयों के कम मध्यम तापमान (107 से 182 डिग्री फारेनहाइट) का उपयोग किया जाता है। इस प्रणाली में गर्म भू-ताप द्रवों को हीट एक्सचेंजर के एक ओर से गुजारा जाता है ताकि साथ के दूसरे पाइप का द्रव गर्म हो जाए और उसका उपयोग किया जा

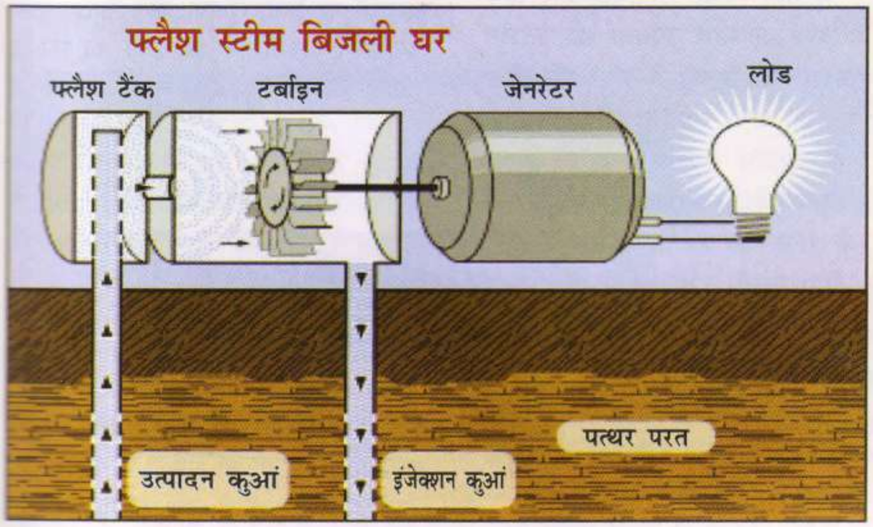

फ्लैश स्टीम भू-ताप बिजलीघर (स्रोत : अमेरिका का ऊर्जा विभाग)

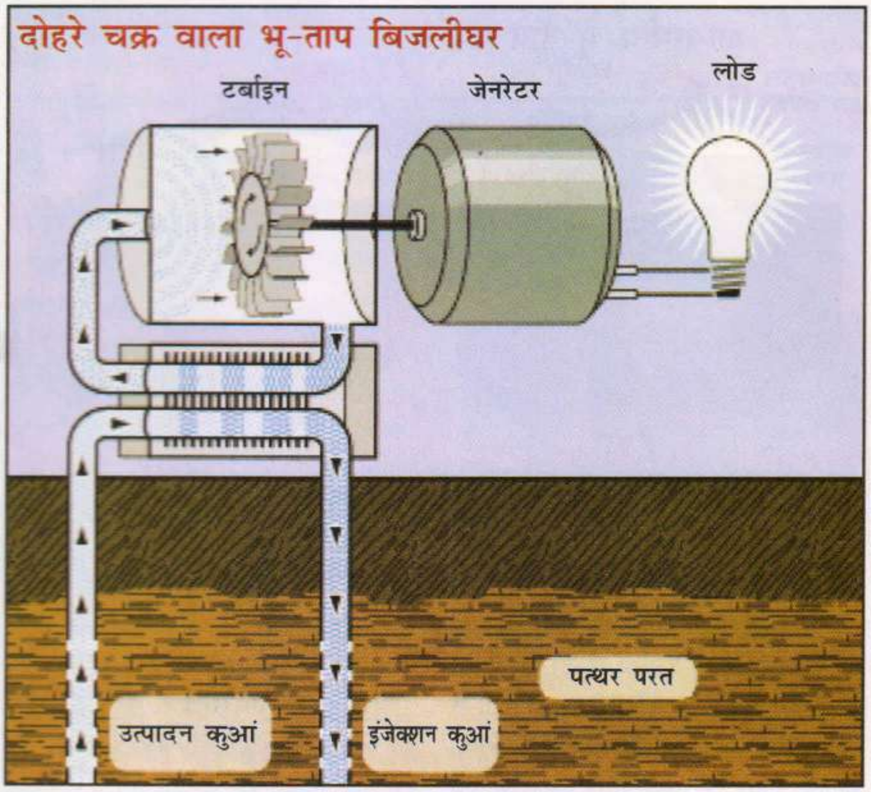

दोहरे चक्र वाला भू-ताप बिजलीघर (स्रोत : अमेरिका का ऊर्जा विभाग)

सके। यह दूसरा द्रव आम तौर पर कोई कार्बनिक यौगिक (जैसे आइसो-ब्यूटेन या आइसो-पेंटेन) होता है जिसका क्वथनांक कम होता है जो वाष्पीकृत हो जाता है और उससे टर्बाइन चलने लगता है जिससे बिजली पैदा होती है।

अन्य तापीय अनुप्रयोग : भू-तापीय बिजली उत्पादन के अलावा इस नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत का उपयोग निम्नलिखित टेक्नोलाजी के जरिए ऐसे कार्यों में उपयोग किया जाता है जिनमें ताप ऊर्जा का सीधा इस्तेमाल होता है :

1. **स्पेस/डिस्ट्रिक्ट हीटिंग :** जिन इलाकों में गर्म पानी के स्रोत या भू-ताप जलाशय धरती की सतह के पास है वहां गर्म पानी को पाइपों के जरिए सीधे घरों या कार्यालयों तक पहुंचा कर इसा उपयोग इमारतों को गर्म रखने में किया जा सकता है। भू-तापीय पानी को हीट एक्सचेंजर के जरिए पम्प किया जाता है जो पानी की गर्मी को इमारत की ताप प्रणाली को अंतरित कर देता है। उपयोग किये जा चुके पानी को फिर से जलाशय में भेज दिया जाता है ताकि उसे फिर से गर्म करके इस्तेमाल में लाया जा सके।

2. **भू-ताप ऊष्मा पम्प/भू-स्रोत ऊष्मा पम्प :** जमीन के अंदर कुछ फुट गहराई में मिट्टी या पानी का तापमान साल भर 50 से 60 डिग्री फारेनहाइट (10-15 डिग्री सेल्सियस) पर स्थिर बना रहता है। इस विधि में भू-ताप पम्प जमीन के अंदर एक ऐसी पाइपों की ऐसी प्रणाली का उपयोग करते हैं जो हीट एक्सचेंजर के जरिए इमारत को गर्म रखने वाली नलियों से जुड़े रहते हैं। सर्दियों के मौसम में जमीन के अंदर का तापमान अपेक्षाकृत अधिक रहने से गर्मी इमारत में स्थानांतरित हो जाती है जबकि गर्मियों में इमारत की गर्मी जमीन को अंतरित हो जाती है या इसमें से कुछ का उपयोग पानी गर्म करने में किया जा सकता है। इस तरह यह हीट पम्प वातानुकूलन का काम करते हैं और सर्दियों में ताप पैदा करने तथा गर्मियों में प्रशीतन के लिए इस्तेमाल में लाए जाते हैं। इसमें इस्तेमाल किया जाने वाले तरल पदार्थ को आपस में जुड़ी पाइप प्रणाली के जरिए जमीन के नीचे या तालाब अथवा झील पानी के भीतर से होकर इमारत से गुजारा जाता है। बिजली के कम्प्रेशर और हीट एक्सचेंजर से पाइपों की गर्मी को पूरी इमारत में पहुंचा दिया जाता है। गर्मियों में यही प्रक्रिया उल्टी हो जाती है। पाइप इमारत की गर्मी को अवशोषित कर लेते हैं और इसे जमीन के भीतर या बाहर पानी में पहुंचा देते हैं।

अनुसंधान, डिजायन, विकास और प्रदर्शन (आरडीडीएंडडी) नीति के तहत उद्योग के नेतृत्व में भू-ताप ऊर्जा के उपयोग संबंधी अनुसंधान और विकास के व्यावहारिक प्रस्तावों पर विचार किया जाना चाहिए तभी नवीकरणीय ऊर्जा के इस स्रोत का फायदा उठाया जा सकेगा। प्रारंभ में भू-ताप विद्युत उत्पादन और ताप ऊर्जा के सीधे उपयोग की प्रदर्शन परियोजनाओं का विकास की योजना बनायी जानी चाहिए। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम भू-ताप ऊर्जा के क्षेत्र में अग्रणी देशों के सहयोग से संसाधनों के आकलन का कार्य करा सकते हैं। जीएसएचपी टेक्नोलाजी के इस्तेमाल से स्पेस कूलिंग और इंडस्ट्रियल प्रोसेस हीटिंग की परियोजनाओं बिजली कंपनियों को सब्सिडी और तरजीही शुल्क के जरिए मदद दी जा सकती है क्योंकि यह टेक्नोलाजी ऊर्जा/पानी की किफायत करने वाली है।

भविष्य की रूपरेखा

अनुसंधान, डिजायन, विकास और प्रदर्शन (आरडीडीएंडडी) नीति के तहत उद्योग के नेतृत्व में भू-ताप ऊर्जा के उपयोग संबंधी अनुसंधान और विकास के व्यावहारिक प्रस्तावों पर विचार किया जाना चाहिए तभी नवीकरणीय ऊर्जा के इस स्रोत का फायदा उठाया जा सकेगा। प्रारंभ में भू-ताप विद्युत उत्पादन और ताप ऊर्जा के सीधे उपयोग की प्रदर्शन परियोजनाओं का विकास की योजना बनायी जानी चाहिए। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम भू-ताप ऊर्जा के क्षेत्र में अग्रणी देशों के सहयोग से संसाधनों के आकलन का कार्य करा सकते हैं। जीएसएचपी टेक्नोलाजी के इस्तेमाल से स्पेस कूलिंग और इंडस्ट्रियल प्रोसेस हीटिंग की परियोजनाओं बिजली कंपनियों को सब्सिडी और तरजीही शुल्क के जरिए मदद दी जा सकती है क्योंकि यह टेक्नोलाजी ऊर्जा/पानी की किफायत करने वाली है। ❑

बायोगैस – एक अनकही कहानी

ऋचा मिश्रा

विद्यालय में पढ़ाया जा सकता है कि ऊर्जा के उत्पादन के लिए ठोस कचरे को गैस में बदला जा सकता है और लैंडफिल में पाए जाने वाले ठोस कचरे को जलाकर बिजली पैदा की जा सकती है। आश्चर्य है कि कैसे?

नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय (एमएनआरई) के अनुसार, भारत में प्रतिदिन लगभग 1,45,128 टन (या लगभग 5 करोड़ 30 लाख टन सालाना) कचरा उत्पन्न होता है और इसमें से औसतन 46 प्रतिशत संसाधित किया जाता है।

भारत जैसे देश के लिए जो महंगे आयातित तेल और गैस आयात के साथ-साथ अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कोयले पर बहुत अधिक निर्भर है, यह निश्चित रूप से अधिक महत्वपूर्ण है कि वैकल्पिक संसाधनों की तलाश की जाए। यही वजह है कि यहां 'कचरे से ऊर्जा कार्यक्रम' महत्वपूर्ण हो जाता है जिसमें शहरी, औद्योगिक और कृषि अपशिष्ट पदार्थों से बायोगैस/बायोसीएनजी/बिजली के रूप में ऊर्जा प्राप्त की जाती है। इसके अलावा, इससे ऑफ-ग्रिड कनेक्टिविटी को बढ़ावा मिलता है।

इस तरह के कार्यक्रम के लिए सरकार से सहायता की आवश्यकता होती है और यह एक बड़ी चुनौती है कि विभिन्न मंत्रालयों के तालमेल में कैसे काम किया जाए। वेस्ट टू एनर्जी मैनेजमेंट यानी कचरे से ऊर्जा कार्यक्रम में एक अन्य चुनौती यह है कि विभिन्न योजनाएं लघु संगठनों के लिए राजस्व सृजन का माध्यम कैसे बन सकती हैं।

लेकिन, यहां एक अड़चन सामाजिक गतिशीलता स्थानांतरित होने से पैदा हुई है।

एक अधिकारी के अनुसार ''किसी भी व्यक्ति के लिए मवेशी पालन-पोषण कठिन हो गया है। अत: व्यक्तिगत बायोगैस संयत्रों की स्थापना में कमी आ रही है। परन्तु, अधिक निजी डेरियों के इस व्यापार में शामिल होने से बड़े व्यक्तिगत संयंत्रों की संभावनाएं बढ़ रही हैं। इसलिए बड़ी परियोजनाओं को बढ़ावा देने के प्रयास किए जाने चाहिए।''

शहरी, औद्योगिक और कृषि अपशिष्ट पर आधारित 184 'कचरे से ऊर्जा' संयंत्र निजी क्षेत्र में स्थापित किए गए हैं। इनकी कुल क्षमता 315.24 मेगावाट की है। परन्तु, इस कार्यक्रम को बढ़ावा देने के लिए अभी भी कई चुनौतियां बाकी हैं क्योंकि इसके लिए सामाजिक मानसिकता में बदलाव लाने की भी जरूरत है।

भारत जैसे देश के लिए जो महंगे आयातित तेल और गैस आयात के साथ-साथ अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कोयले पर बहुत अधिक निर्भर है, यह निश्चित रूप से अधिक महत्वपूर्ण है कि वैकल्पिक संसाधनों की तलाश की जाए। यही वजह है कि यहां 'कचरे से ऊर्जा कार्यक्रम' महत्वपूर्ण हो जाता है जिसमें शहरी, औद्योगिक और कृषि अपशिष्ट पदार्थों से बायोगैस/बायोसीएनजी/बिजली के रूप में ऊर्जा प्राप्त की जाती है। इसके अलावा, इससे ऑफ-ग्रिड कनेक्टिविटी को बढ़ावा मिलता है

लेखिका द हिंदू – बिजनेस लाइन में असोसिएट एडिटर/दिल्ली ब्यूरो चीफ हैं। ईमेल: richa.mishra@thehindu.co.in

शहरी, औद्योगिक और कृषि अपशिष्ट पर आधारित 184 'कचरे से ऊर्जा' संयंत्र निजी क्षेत्र में स्थापित किए गए हैं। इनकी कुल क्षमता 315.24 मेगावाट की है। परन्तु, इस कार्यक्रम को बढ़ावा देने के लिए अभी भी कई चुनौतियां बाकी हैं क्योंकि इसके लिए सामाजिक मानसिकता में बदलाव लाने की भी जरूरत है।

यह भी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि 'अपशिष्ट से ऊर्जा संयंत्र' स्वयं किसी भी पर्यावरणीय मानदंडों का उल्लंघन न करते हों। शहरी ठोस कचरे के संदर्भ में यह बात विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इस अवधारणा को लोकप्रिय बनाना एक अन्य कठिन कार्य है, जिसके लिए संयंत्र स्थापित करने में, सरकारी भागीदारी के साथ-साथ वित्तीय सहायता की आवश्यकता होती है, क्योंकि यह कार्य सस्ते में संभव नहीं है।

बायोगैस का उपयोग परिवहन ईंधन के लिए किया जा सकता है। वास्तव में, तेल शोधन और विपणन कंपनियों ने इसे वास्तविकता बनाने की दिशा में काम किया है। सीबीजी (कम्प्रेस्ड बायो गैस) क्या है औरं यह कैसे काम करती है? विशेषज्ञों के अनुसार, इसमें अधिक किफायती परिवहन ईंधन की उपलब्धता बढ़ाने, कृषि अवशेषों और मवेशियों के गोबर के बेहतर उपयोग के साथ-साथ किसानों को एक अतिरिक्त राजस्व स्रोत प्रदान करने की क्षमता है।

इसे सस्टेनेबल अल्टरनेटिव टूवर्ड्स अफोर्डेबल ट्रांसपोर्टेशन (एसएटीएटी) अर्थात् किफायती परिवहन के लिए एक स्थायी विकल्प कहा जाता है। इससे वाहन-उपयोगकर्ताओं के साथ-साथ किसानों और उद्यमियों को भी लाभ होने की उम्मीद है। इसके अतिरिक्त सीबीजी कच्चे तेल और गैस आयात पर निर्भरता कम करने में भी मदद करेगी। भारत में विभिन्न स्रोतों से सीबीजी उत्पादन की संभावना लगभग 6.2 करोड़ टन सालाना है।

सीबीजी का उत्पादन विभिन्न बायो-मास/अपशिष्ट स्रोतों से किया जा सकता है, जिनमें कृषि अवशेष, गन्ने की खोई, शराब कारखानों के बचे-खुचे तरल पदार्थ, मवेशी गोबर और अवजल उपचार संयंत्रों से निकलने वाला कचरा शामिल है। अन्य अपशिष्ट स्रोतों-जैसे कोल्ड स्टोरेज से सड़े हुए आलू, सड़ी हुई सब्जियां, डेरी संयंत्र एवं चिकन/पोल्ट्री से उत्सर्जित पदार्थ, खाद्य अपशिष्ट, बागवानी अपशिष्ट, वानिकी अवशेष और औद्योगिक अपशिष्ट उपचार

संयंत्रों (ईटीपी) से उपचारित जैविक कचरे का उपयोग बायोगैस उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता है।

वास्तव में, सीबीजी अपनी संरचना और ऊर्जा क्षमता में व्यावसायिक रूप से उपलब्ध प्राकृतिक गैस के समान है और इसे वैकल्पिक, नवीकरणीय मोटर वाहन ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। देश में बायोमास की प्रचुरता को देखते हुए, सीबीजी में आने वाले वर्षों में मोटर वाहन, औद्योगिक और वाणिज्यिक उपयोगों में सीएनजी का स्थान लेने की क्षमता है। उद्योग विशेषज्ञों का कहना है कि राष्ट्र अगर इसका फायदा उठाता है, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि एक दिन गैस का आयात शून्य हो जाएगा।

कृषि अवशेषों, गोबर को व्यावसायिक पैमाने पर सीबीजी में परिवर्तित करने से कई लाभ हैं:

- बेहतर अपशिष्ट प्रबंधन, कार्बन उत्सर्जन और प्रदूषण में कमी।
- किसानों के लिए अतिरिक्त राजस्व स्रोत।
- उद्यमशीलता, ग्रामीण अर्थव्यवस्था और रोज़गार को बढ़ावा देना।
- जलवायु परिवर्तन लक्ष्यों को प्राप्त करने में राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं को पूरा करने में मदद।
- प्राकृतिक गैस और कच्चे तेल के आयात में कमी
- कच्चे तेल/गैस की कीमत में उतार-चढ़ाव के प्रतिकूल प्रभाव से बचने के लिए सुरक्षित भंडार।

परन्तु, बहुत कुछ मूल्य निर्धारण पर निर्भर करता है क्योंकि भारत एक मूल्य संवेदनशील बाजार है। जैव ईंधन संबंधी कार्य समूह, सीबीजी के लिए एक अखिल भारतीय मूल्य निर्धारण मॉडल को अंतिम रूप देने की प्रक्रिया में है। इसके अलावा, प्रस्ताव के अनुसार, निवेश पर लाभ बढ़ाने के लिए, उद्यमी इन संयंत्रों से उत्पन्न अन्य उप-उत्पादों जैसे जैविक खाद, कार्बन-डाइऑक्साइड, आदि का अलग से विपणन कर सकेंगे।

सौर और पवन ऊर्जा ने एक आकर्षक अनुपात विकसित किया था, पर वे केवल कोयले या अन्य जीवाश्म ईंधन के लिए विकल्प हो सकते हैं। वास्तव में, बायो-गैस ऐसा ईंधन है जो भारत के पक्ष में सार्थक है। परन्तु यह सही है कि सीबीजी गुणवत्ता और विपणन जैसी चुनौतियां विद्यमान हैं।

सौर और पवन ऊर्जा ने एक आकर्षक अनुपात विकसित किया था, पर वे केवल कोयले या अन्य जीवाश्म ईंधन के लिए विकल्प हो सकते हैं। वास्तव में, बायो-गैस ऐसा ईंधन है जो भारत के पक्ष में सार्थक है। परन्तु यह सही है कि सीबीजी गुणवत्ता और विपणन जैसी चुनौतियां विद्यमान हैं।

सरकारी सहायता के बिना बायोगैस सफल नहीं हो सकती क्योंकि यह अभी भी यहां बहुत ही नवजात अवस्था में है। लेकिन, एक बार इसके गति पकड़ने के बाद सरकार एक सुविधा प्रदाता की भूमिका निभा सकती है और निजी क्षेत्र को यह उद्यम संचालित करने के लिए प्रेरित कर सकती है। ❑

पर्यावरण के लिए गाड़ियों का हरित अभियान

वेंकटेश द्विवेदी

इलेक्ट्रिक मोबिलिटी (विद्युत गतिशीलता) परिवहन क्षेत्र के लिए निर्णायक बदलाव का माध्यम बन रही है। वैश्विक स्तर पर इसकी पहुंच में हर साल तकरीबन 75 फीसदी की दर से बढ़ोतरी हो रही है। इलेक्ट्रिक मोबिलिटी के लिए भारत का अपना नजरिया और रणनीति है: 8 सदस्यों वाली स्वच्छ ऊर्जा समिति के सदस्य के रूप में भारत का मकसद 2030 तक सड़कों पर इलेक्ट्रिक गाड़ियों की हिस्सेदारी 30 फीसदी तक करना है। स्वच्छ ऊर्जा समिति साफ-सुथरी ऊर्जा संबंधी नीतियों और कार्यक्रमों को बढ़ावा देने वाला फोरम है। इलेक्ट्रिक गाड़ियों को लेकर भारत का यह लक्ष्य न सिर्फ कच्चे तेल पर निर्भरता खत्म करने के मकसद से है, बल्कि इसके पीछे पर्यावरण भी प्रमुख वजह है।

पर्यावरण के लिए इलेक्ट्रिक पर जोर

जीवाश्म-ईंधन से जुड़ी वाहन प्रणाली कई वजहों से पर्यावरण के लिहाज से टिकाऊ नहीं होती है। सबसे प्रमुख वजह इसमें ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन है। इंटर्नल कंबस्टन इंजन (आईसीई) दुनियाभर में वायु प्रदूषण का प्रमुख स्रोत हैं और भारत को अक्सर वैसे देशों की सूची में शामिल किया जाता है, जहां गाड़ियों के प्रदूषण की दर दुनिया में सबसे ज्यादा है। साथ ही, यहां वायु प्रदूषण से जुड़ी मौतें भी सबसे ज्यादा होती हैं।

राष्ट्रीय हरित अधिकरण (एनजीटी) के मुताबिक, देश के शहरों में वायु प्रदूषण में वाहनों का प्रदूषण की हिस्सेदारी काफी ज्यादा है। भारत में 2030 तक वाहनों से जुड़े 40 करोड़ ग्राहक हो जाने की उम्मीद

> इलेक्ट्रिक वाहनों को लोकप्रिय बनाने के लिए मांग और आपूर्ति संबंधी प्रोत्साहन, बैटरी तकनीक और प्रबंधन प्रणाली में शोध और विकास को बढ़ावा; चार्जिंग से जुड़ी आधारभूत संरचना को बढ़ावा कुछ ऐसे उपाय जरूरी हैं। इलेक्ट्रिक गाड़ियों के बड़े पैमाने पर लोकप्रिय होने से इस खंड में निवेश को भी बढ़ावा मिलेगा

लेखक एनर्जी एफिशिएंसी सर्विसेज़ लिमिटेड में निदेशक (परियोजना और कारोबार विकास) हैं। ईमेल: vdwivedi@eesl.co.in

है। दुनिया के इस विशाल ऑटो मार्केट में जीवाश्म-ईंधन वाले वाहन पर्यावरण को बनाए रखने में खतरनाक होंगे।

कुल मिलाकर कहा जाए तो इलेक्ट्रिक गाड़ियां पर्यावरण के लिहाज से ज्यादा बेहतर है। इन गाड़ियों में जीरो-टेल पाइप मिशन है, क्योंकि इसमें इंटर्नल कंबस्टन इंजन (आईसीई) इंजन का इस्तेमाल नहीं होता है। नीति आयोग की रिपोर्ट के मुताबिक, भारत 2030 तक सड़क परिवहन के लिए ऊर्जा की मांग 64 फीसदी तक और कार्बन उत्सर्जन की मांग 37 फीसदी तक कम कर सकता है। परिवहन के साधनों में इलेक्ट्रिक वाहनों को प्रमुखता देकर पर्यावरण का भविष्य सुरक्षित किया जा सकता है।

भविष्य में इलेक्ट्रिक वाहनों के उत्सर्जन का क्या होगा?

इस अभियान के विरोधी यह तर्क दे सकते हैं कि इलेक्ट्रिक गाड़ियां अगर पेट्रोल और डीजल का इस्तेमाल नहीं कर रही हैं, तो इसका मतलब यही है कि सिर्फ जीवाश्म ईंधन का बोझ हस्तांतरित हो रहा है, क्योंकि बिजली उत्पादन का प्रमुख जरिया कोयला ही है। भारत में फिलहाल देश की 70 फीसदी ऊर्जा जरूरतों की पूर्ति कोयला आधारित ताप ऊर्जा संयंत्रों के जरिये होती है। पर्यावरण के लिहाज से देखा जाए तो कोयला भारत की ऊर्जा मूल्य शृंखला के लिए अभिशाप

> बैटरी तकनीक में निवेश भी पर्यावरण के नजरिये से काफी महत्वपूर्ण है। स्टोरेज (भंडारण) को सौर और पवन जैसे ऊर्जा के साधनों पर निर्भर बनाने के साथ ही बैटरी तकनीक कोयले पर निर्भरता से इतर अलग विकल्प मुहैया कराती है।

की तरह है। यह कार्बन डाइऑक्सइड जैसा जहरीला रसायन छोड़ता है। साथ ही, ताप उत्पादन की प्रक्रिया में कोयला सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइन और पारा भी छोड़ता है। ये सभी जहरीले पार्टिक्यूलेट मैटर हवा में घुलते हैं। फरवरी में जर्नल-'नेचर सस्टेनिबिलिटी' में छपे अध्ययन के मुताबिक, भारत में कोयला आधारित ऊर्जा संयंत्र स्वास्थ्य पर बुरे प्रभाव के लिहाज से सबसे खतरनाक हैं।

क्या इलेक्ट्रिक वाहनों से जुड़ी मांग-आपूर्ति प्रणाली के कारण कोयला आधारित ऊर्जा की मांग बढ़ेगी?

पहले, हम इसके गणित पर बात करते हैं। एक किलोवाट ऊर्जा से कोई इलेक्ट्रिक गाड़ी तकरीबन 10 किलोमीटर तक चल सकती है। अगर इस ऊर्जा के लिए कोयले का उत्पादन किया जाता है, तो इससे 1 किलोग्राम कार्बन डाइऑक्साइड निकलता है। इसकी तुलना में एक लीटर पेट्रोल या डीजल औसतन गाड़ियों के लिए 10 किलोमीटर की ड्राइव मुहैया करा सकता है और इससे प्रति किलोमीटर 2.3 से 2.7 किलो कार्बन निकलती है। इसी तरह यूरोप में हुए शोध ने दिखाया है कि सबसे ज्यादा कार्बन आधारित इलेक्ट्रिक गाड़ियों में भी परंपरागत इन्टर्नल कंबस्टन इंजन वाली गाड़ी के मुकाबले कम प्रदूषण-उत्सर्जन होता है। दूसरा, इलेक्ट्रिक गाड़ियां तकरीबन 59 प्रतिशत-62 प्रतिशत ग्रिड ऊर्जा को पहियों की ताकत (पावर) में बदल देती हैं। इसकी तुलना में आईसीई गाड़ियां संभवत: पेट्रोल की ऊर्जा का 20 फीसदी हिस्सा ही पावर में बदल पाती हैं। यह पूरी तरह से साफ है कि कोयला आधारित ऊर्जा के बावजूद इलेक्ट्रिक गाड़ियां परंपरागत ईंधन की तुलना में ज्यादा बेहतर (उत्सर्जन के मामले में) हैं। साथ ही, जब हम उत्सर्जन का आकलन विशुद्ध ऊर्जा उत्पादन (अक्षय बनाम परंपरागत) के नजरिये से करते हैं, तो इसमें तेल निकालने, इसके परिशोधन और इसके बाद इसे पेट्रोल या डीजल बनाने में लगने वाली पर्याप्त ऊर्जा को इसमें शामिल नहीं करते हैं। कुल मिलाकर कहें तो इलेक्ट्रिक वाहनों के मामले में परंपरागत ऊर्जा (चाहे वह कोयला से प्राप्त की गई हो या पेट्रोल/डीजल) हमेशा कम प्रभावी रहता है।

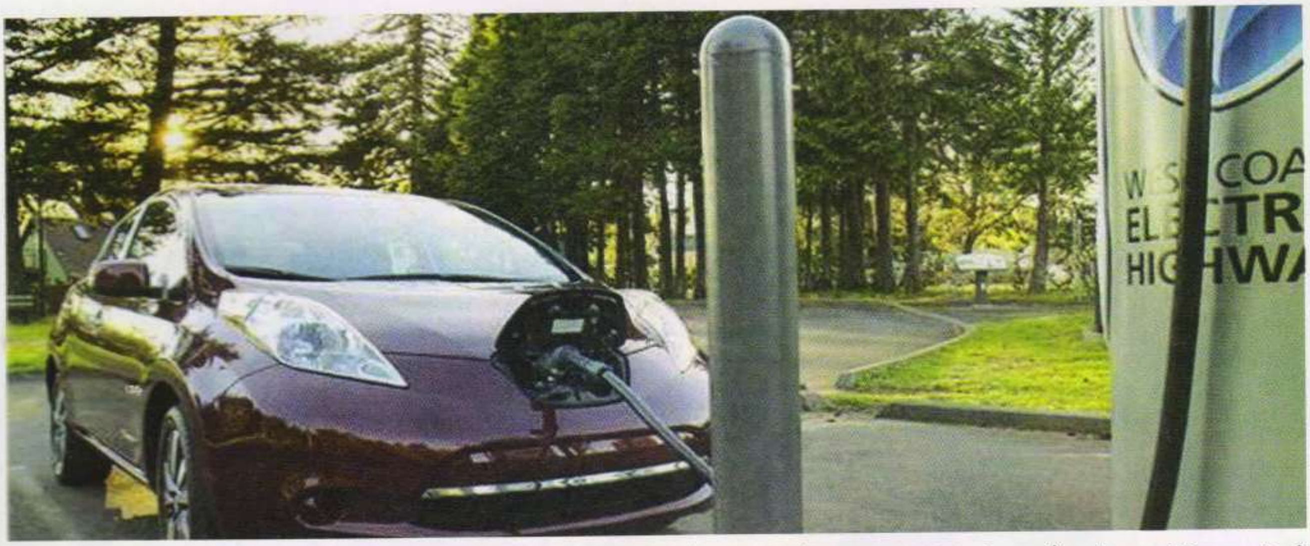

दूसरा, भारत तेजी से अक्षय ऊर्जा की अगुवाई में ऊर्जा से जुड़े बदलाव को अंजाम दे रहा है। केंद्रीय विद्युत प्राधिकरण (सीईओ) के आंकड़ों के मुताबिक, भारत साल 2022 तक 100 गीगावाट सौर ऊर्जा क्षमता (125 गीगावॉट अक्षय ऊर्जा उत्पादन का लक्ष्य) के लक्ष्य से बेहतर प्रदर्शन कर सकता है। इस संबंध में तय किए गए मजबूत लक्ष्य के कारण उद्योग जगत और नीति निर्माता बड़े पैमाने पर एक साथ मिलकर काम करने के लिए प्रेरित हुए। नतीजा: भारत आज अक्षय ऊर्जा उपकरण के मामले में दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा आकर्षक बाजार है। साथ ही, यह सुनिश्चित करने के लिए भी कई योजनाएं तैयार की गई हैं कि सौर व ऊर्जा के अन्य स्रोतों को उनकी सबसे बड़ी कमजोरी-ठहराव या अनियमितता से नुकसान नहीं हो। भारत के अक्षय ऊर्जा के खिलाड़ियों ने उत्पादन के मामले में अपनी क्षमता को साबित किया है, लेकिन बड़ी चुनौती ट्रांसमिशन संबंधी बाधाओं को लेकर है।

हाल में शुरू किए गए राष्ट्रीय परिवर्तनकारी गतिशीलता और बैटरी स्टोरेज मिशन के तहत भारत में बड़े पैमाने पर आयात-प्रतिस्पर्धी बैटरी और मोबाइल विनिर्माण से जुड़ी गीगा-संयंत्र स्थापित करने को बढ़ावा दिया जा रहा है। मिशन के तहत चरणबद्ध तरीके से इन संयंत्रों को स्थापित करने की योजना है। मिशन का जोर स्थानीय स्तर पर उत्पादन को बढ़ावा देने का है, ताकि बैटरी स्टोरेज की लागत को कम किया जा सके। चूंकि इलेक्ट्रिक गाड़ियों की कुल लागत में बैटरी की लागत की अहम हिस्सेदारी होती है, लिहाजा यह कदम इलेक्ट्रिक गाड़ियों को और किफायती बना सकता है, जिससे इनका आकर्षण बढ़ जाएगा।

बैटरी तकनीक में निवेश भी पर्यावरण के नजरिये से काफी महत्वपूर्ण है। स्टोरेज (भंडारण) को सौर और पवन जैसे ऊर्जा के साधनों पर निर्भर बनाने के साथ ही बैटरी तकनीक कोयले पर निर्भरता से इतर अलग विकल्प मुहैया कराती है। भेल जैसी डिस्ट्रीब्यूशन कंपनियां सौर ऊर्जा वाले सार्वजनिक चार्जिंग स्टेशन भी खोल रही हैं और देशभर में इलेक्ट्रिक गाड़ियों की जीरो-उत्सर्जन वाली ऊर्जा मुहैया करा रही हैं। इन कदमों से अक्षय ऊर्जा और इलेक्ट्रिक मोबिलिटी के बीच न सिर्फ मजबूत संयोजन स्थापित हो रहा है, बल्कि इलेक्ट्रिक गाड़ियों के मालिकों को आसानी से और किफायती दरों पर अक्षय ऊर्जा की उपलब्धता भी हासिल हो सकती है।

कुल मिलाकर कहा जाए तो इलेक्ट्रिक गाड़ियां पर्यावरण के लिहाज से ज्यादा बेहतर है। इन गाड़ियों में जीरो-टेल पाइप मिशन है, क्योंकि इसमें इंटर्नल कंबस्टन इंजन (आईसीई) इंजन का इस्तेमाल नहीं होता है। नीति आयोग की रिपोर्ट के मुताबिक, भारत 2030 तक सड़क परिवहन के लिए ऊर्जा की मांग 64 फीसदी तक और कार्बन उत्सर्जन की मांग 37 फीसदी तक कम कर सकता है। परिवहन के साधनों में इलेक्ट्रिक वाहनों को प्रमुखता देकर पर्यावरण का भविष्य सुरक्षित किया जा सकता है।

किस तरह से इलेक्ट्रिक बदलाव का मार्ग प्रशस्त कर रहा है भारत

इलेक्ट्रिक वाहनों को लोकप्रिय बनाने के लिए मांग और आपूर्ति संबंधी प्रोत्साहन, बैटरी तकनीक और प्रबंधन प्रणाली में शोध और विकास को बढ़ावा; चार्जिंग से जुड़ी आधारभूत संरचना को बढ़ावा कुछ ऐसे उपाय जरूरी हैं। इलेक्ट्रिक गाड़ियों के बड़े पैमाने पर लोकप्रिय होने से इस खंड में निवेश को भी बढ़ावा मिलेगा। भारत में इलेक्ट्रिक गाड़ियों की कहानी पिछले दो दशकों से चल रही है और अब यह मोबिलिटी और अक्षय ऊर्जा माध्यम पर जोर, दोनों लिहाज से रफ्तार पकड़ रही है। सेहत पर वायु प्रदूषण के बुरे असर के बारे में लोगों की जागरूकता बढ़ने और इलेक्ट्रिक गाड़ियों के लिए मजबूत नीतियां बनाए जाने से निजी क्षेत्र में तेजी से बढ़ते ऐसी गाड़ियों के लिए मजबूत पारिस्थितिकी तंत्र तैयार हुआ है। भारत का ई-मोबिलिटी क्षेत्र अपने वैश्विक समकक्षों से संकेत, नजरिया और जानकारी हासिल कर रहा है और भारतीय परिप्रेक्ष्य में अच्छी नीतियों को अपनाना है। इलेक्ट्रिक गाड़ियों से जुड़ा पर्यावरण और आर्थिक, दोनों फायदों को देखते हुए 30 फीसदी से ज्यादा गाड़ियों के विद्युतीकरण की जरूरत होगी और ओईएम और ऑटोमोबाइल, तकनीक, ऊर्जा और संबंधित अन्य क्षेत्रों से संबंधित सेवा प्रदाताओं के बीच व्यापक स्तर पर सहयोग देखने को मिलेगा। ❑

वन और जल-संरक्षण तथा चिरस्थायी विकास

सविता

पृथ्वी की पारिस्थितिकीय प्रणाली और उनके द्वारा उपलब्ध कराये जाने वाले भोजन, जल, जलवायु विनियमन, अध्यात्मिक पूर्णता और सुंदरता से भरे वातावरण से धरती में मानव जीवन का अस्तित्व बना हुआ है (मिलेनियम पारिस्थितिकी तंत्र एसेसमेंट, 2005)। नदियों की बाढ़ के डूब-क्षेत्र में आने वाले इलाके धरती की सबसे गतिशील पारिस्थितिकीय प्रणालियों में शामिल हैं। लेकिन पिछले कुछ दशकों में उद्योगों की वजह से विश्व में स्वच्छ जल की मांग में भारी बढ़ोतरी और जल का समान वितरण न होने से इनमें से अधिकांश पारिस्थितिकीय प्रणालियां काफी गड़बड़ा गयी हैं। मानवीय गतिविधियों के कारण विश्व की अधिकांश बड़ी नदियों की बाढ़ के डूब वाले इलाकों की पारिस्थितिकीय प्रणालियां पूरी तरह बदल गयी हैं।

धरती पर जीवन के जितने भी रूप पाये जाते हैं सबके लिए पानी आवश्यक है। यह कहना गलत नहीं होगा कि पानी प्रकृति का संचालन करने वाली शक्ति है। स्वच्छ जल समूची मानवता के लिए महत्वपूर्ण और अनिवार्य संसाधनों में से है। हालांकि दुनिया का करीब 70 प्रतिशत भूभाग पानी से ढका है, मगर इसमें से 2.5 प्रतिशत पर ही स्वच्छ पेयजल उपलब्ध है और एक प्रतिशत से भी कम पानी नदी-नालों और झीलों के रूप में मनुष्य के लिए उपलब्ध है। नदी-नालों, झीलों, तालाबों, चश्मों, भूमिगत जल, कंदराओं के अंदर उपलब्ध जल, आर्द्रभूमि (दलदली और आप्लावित भूमि) तथा नदियों के बाढ़वाले इलाके में उपलब्ध स्वच्छ पेयजल धरती पर जीवन और ऐतिहासिक सभ्यताओं का अस्तित्व बनाए रखने और के लिए एक महत्वपूर्ण नवीकरणीय प्राकृतिक संसाधन है।

जल संकट

पानी की कमी समसामयिक और भावी विश्व का सबसे विकट मसला है। दुनिया की बढ़ती आबादी, लोगों के जीवन स्तर में सुधार, उपभोग के बदलते तौर-तरीकों और खेती के लिए सिंचाई की सुविधा के विस्तार जैसे कारणों से विश्व में पानी की मांग बढ़ी है। जलवायु परिवर्तन, वनों के विनाश, प्रदूषण, ग्रीनहाउस गैसों और पानी की फिजूलखर्ची से भी पानी की पर्याप्त सप्लाई में बाधा उत्पन्न हुई है। शहरीकरण की वजह से भी वन क्षेत्र में भारी कमी आयी है जिससे भूमिगत जल स्तर को नियंत्रित करने वाले बनों के अस्तित्व के लिए भी संकट उत्पन्न हो गया है। इसी तरह ऊंचाई वाले इलाकों में सड़क नेटवर्क के विस्तार से इन क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर भूस्खलन और चट्टानें खिसकने की घटनाएं हुई हैं जिससे अविरल जल धाराओं को अपूरणीय क्षति पहुंची है। इन कारणों ने विश्व के प्रमुख जल स्रोतों की पारिस्थितिकीय कार्यप्रणाली पर असर डाला है और परिणामस्वरूप विभिन्न स्वच्छ पेयजल प्रणालियां नष्ट हो गयी हैं। इससे दुनिया की करीब दो अरब जनसंख्या पानी की किल्लत की स्थिति का सामना कर रही है और समय के साथ-साथ और गंभीर होने की आशंका है। असल में स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता

चित्र 1 : वन-जल संपर्कता

लेखिका मुख्य वन संरक्षक (वन्यजीव) तथा हिमाचल प्रदेश सरकार में मुख्य वन्यजीव वार्डन हैं। ईमेल: savvysavita@hotmail.com

चित्र 2 : मुल्लापेरियार बांध

को विकास का पैमाना माना जा सकता है– पानी उपलब्ध होना विकास की पहली सीढ़ी है। स्वच्छ पेयजल तक लोगों की पहुंच, इसकी गुणवत्ता और मात्रा आज दुनिया का सबसे बड़ा सरोकार बनते जा रहे हैं। भारत भी इसका अपवाद नहीं है क्योंकि दुनिया की कुल आबादी का छठा हिस्सा यहां रहता है जबकि अर्थव्यवस्था के कृषि, विद्युत और जैविक उत्पादकता जैसे महत्वपूर्ण घटकों के चिरस्थायित्व के लिए यहां जल संसाधन 4 प्रतिशत से भी कम हैं। भूतलीय जल की प्रति व्यक्ति उपलब्धता लगातार घटी है और निकट भविष्य में देश में 'पानी के संकट' की नौबत आने की आशंका है। पानी के संकट से स्वास्थ्य के लिए खतरा भी पैदा हो सकता है। इसका सबसे बुरा असर महिलाओं पर पड़ सकता है। इससे उन्हें दिनभर में अपने बहुमूल्य समय का काफी हिस्सा पानी लाने और परिवार की देखरेख करने में लगाने पर मजबूतर होना पड़ सकता है जिससे आर्थिक गतिविधियों के लिए उपलब्ध समय व्यर्थ जा सकता है।

वन, जल और जनता-आपसी संबंध

जल, वन और जन आपस में घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। पानी के जरूरत से ज्यादा उपयोग, दुरुपयोग और प्रदूषण के स्तर में लगातार वृद्धि से उपलब्ध पानी की गुणवत्ता और मात्रा के लिए खतरा लगातार बढ़ता जा रहा है। यह बात वैज्ञानिक तौर पर मानी जाने लगी है कि वनों से पानी की गुणवत्ता और मात्रा दोनों पर जबरदस्त असर पड़ता है। बनों की हालत और इनकी संरचना का पानी की उपलब्धता और मात्रा पर सीधा असर पड़ता है। इससे वनों और पानी के बीच संबंधों के महत्व का पता चलता है। वन क्षेत्र नदियों और उनके जलग्रहण क्षेत्र के न केवल जल ग्रहण क्षेत्र का कार्य करते हैं, बल्कि अक्सर नदियों का उद्‌गम वनों से ही होता है। जल, आर्द्र क्षेत्र और वन लगातार एक-दूसरे पर असर डालते हैं जिससे स्वस्थ और उत्पादक पारिस्थितिकीय प्रणाली का निर्माण होता है। जंगल वर्षा के जल, बर्फ के पिघलने से बने पानी को अवशोषित कर लेते हैं, वे मिट्टी के कटाव को कम करते हैं, पानी के जमीन में जज्ब होने की दर में सुधार करते हैं और जमीन के भीतर के जलाशयों को फिर से भरने में मदद करते हैं। ऐसा करते हुए वे स्पंज की तरह काम करते हैं जो पानी का अवशोषण कर लेता है। इसी तरह नदी-नालों के किनारों पर उगे वन प्रदूषकों को नदियों में पहुंचने से रोकने में फिल्टर की तरह काम करते हैं। इस तरह जल वैज्ञानिक चक्र को सुचारु बनाए रखने और उसके सही तरह से कार्य करने में वनों की निस्संदेह महत्वपूर्ण भूमिका है। जैव विविधता का भंडार होने के नाते ये धरती के वायुमंडल पर असर डालने वाली कार्बन डाइऑक्साइड, ऑक्सीजन और अन्य गैसों के पुनर्चक्रण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

वन - संरक्षण का महत्व

अति प्रचीन काल से मनुष्य को वनों के महत्व का पता रहा है। वनों को इमारती लकड़ी, विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों, जलावन, औषधीय पेड़-पौधों का स्रोत और वन्य जीवों का निवास स्थान माना जाता है। नदियों के जलग्रहण क्षेत्र के रूप में वन नदियों में पानी की मात्रा, गुणवत्ता और पानी के बहाव की अवधि के साथ-साथ मिट्टी के कटाव या निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वन मनुष्य की प्रेरणा के स्रोत भी रहे हैं और इनका उपयोग पर्यटन और मनोरंजन स्थल के रूप में भी होता आया है। वन न केवल विभिन्न प्रकार की सेवाएं उपलब्ध कराते हैं बल्कि विभिन्न लोग उनके महत्व को अलग-अलग तरीके से समझते आये हैं। जंगलों वाले जलग्रहण क्षेत्र से घरेलू, कृषि, औद्योगिक और पारिस्थितिकीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए काफी बड़ी मात्रा में जल प्राप्त होता है। हम जिस पानी का उपयोग करते हैं उसकी हालत इस बात का स्पष्ट संकेत दे देती है कि हम धरती में किस तरह से रह रहे हैं। जल प्रबंधन को तब तक टिकाऊ नहीं बनाया जा सकता जब तक कि पानी की उपलब्धता को प्रभावित

करने वाली महत्वपूर्ण पारिस्थितिकीय सेवाओं पर समूचे परिवेश के चिरस्थायित्व के दृष्टिकोण से विचार नहीं किया जाता।

वनों के जलग्रहण क्षेत्र की क्षमता का दोहन : देश के प्रमुख शहरों और सूखे इलाकों में पानी की आपूर्ति बढ़ाने के लिए वनाच्छादित जल ग्रहण क्षेत्रों के उपयोग की दिशा में किये गये कुछ प्रमुख प्रयासों के बारे में नीचे बताया गया है :

- केरल में पेरियार नदी पर मुल्लापेरियार बांध का निर्माण नदी के पानी को पूर्व में तत्कालीन मद्रास प्रेजीडेंसी के मदुरै क्षेत्र के वर्षा रहित शुष्क क्षेत्र की ओर भेजने के लिए किया गया और 26 वर्ग कि.मी। की एक विशाल झील का निर्माण हुआ। आज इस झील और इसके आस-पास के वन क्षेत्र को पेरियार बाघ अभयारण्य के नाम से जाना जाता है। पेरियार नदी के पानी के बहाव में बदलाव से वैगाई नदी में पानी का मामूली प्रवाह तेज हो गया और पानी की किल्लत वाले शुष्क क्षेत्र में बदलाव स्पष्ट दिखाई देने लगे जिससे कृषि उत्पादन के रूप में लोगों के लिए आजीविका के टिकाऊ साधन उपलब्ध हुए। (चित्र 2)।
- जम्मू-कश्मीर के श्रीनगर शहर में स्वच्छ पेयजल की आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए देगवान नदी के जलग्रहण क्षेत्र में 500 वर्ग कि.मी। में फैले मध्यवर्ती ढलानों में विविधतापूर्ण वनों और अधिक ऊंचाई पर स्थिति ओलीगोट्रोफिक मरसार झील का संरक्षण किया गया। (जिस झील में जलीय वनस्पतियों की कमी हो और पानी में ऑक्सीजन की अधिकता हो उसे ओलीगोट्रोफिक झील कहा जाता है)।
- इसी तरह की पहल ब्रिटिश शासन के समय में शिमला शहर में पानी की सप्लाई सुनिश्चित करने के लिए की गयी थी।

  शिमला के 8 कि.मी. पूर्व में 10.15 वर्ग मि.मी. का देवदार और बांज के वृक्षों का घना जंगल था जो जलग्रहण क्षेत्र का कार्य करता था। यह वन शिमला नगरपालिका समिति को 1878 में पट्टे पर दिया गया था। तब से शिमला शहर को पानी की आपूर्ति इस जलग्रहण क्षेत्र की बदौलत हो रही है।
- इसी तरह मुंबई महानगर में जल आपूर्ति प्रणाली 150 साल पुरानी है। शहर में विभिन्न जलाशयों से पानी आता है। ठाणे जिले की तनसा नदल पर तानसा बांध 1892 में बना था। स्वतंत्रता से पहले तानसा ही मुंबई में पानी का प्रमुख स्रोत था और यहां से महानगर को पानी की आपूर्ति के लिए बड़ी पाइपलाइन बिछाई गयी। यह बांध तानसा अभयारण्य में स्थित है जिसका वनाच्छादित जल ग्रहण क्षेत्र स्पंज की तरह पानी को अवशोषित करने का काम करता है और मानसून के बीत जाने के बाद भी इससे नदी में पानी का प्रवाह बना रहता है।

वन प्रबंधन और जल संरक्षण

प्रकृति में वन और विविध नैसर्गिक जल संसाधन (भूतलीय जल और भूमिगत जल) बड़े जटिल और गतिशील रूप में पाये जाते हैं। भारत में वनों के प्रबंधन का बड़ा प्राचीन इतिहास रहा है। इसी तरह शुष्क क्षेत्रों में जल संचयन तथा पानी के उपयोग की पारम्परिक प्रणाली रही है जिसको विधिवत प्रलेखबद्ध भी किया गया है।

चित्र 3 : शिमला वन जलग्रहण क्षेत्र

नीति और कानूनी ढांचा : भारत में बन प्रबंधन की शुरुआत 1860 के दशक में हो गयी थी सुरक्षित वनों की स्थापना, वन संबंधी कायदे-कानूनों पर अमल और वन संवर्धन पर आधारित कार्यों से मानी जा सकती है। राज्यों में वन विभाग गठित किये गये और वन कर्मियों को प्रशिक्षित किया गया। राज्यों के वन विभाग वनों और वन्य जीवों के संरक्षक हैं। भारत के संविधा के अनुच्छेद 48-क में पर्यावरण के संरक्षण की ज़िम्मेदारी स्पष्ट रूप से राज्यों को सौंपी गयी है। वनों और वन्य जीवों का संरक्षण समवर्ती सूची का विषय है। पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986 वह व्यापक कानून है जिसके तहत पर्यावरण के तमाम पहलुओं का संरक्षण शामिल है। प्रदूषण और जल गुणवत्ता का मसला जल (प्रदूषण निवरण अैर नियंत्रण) अधिनियम, 1974 के अंतर्गत आता है। भारतीय वन अधिनियम, 1972 और वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 वनों के प्रशासन से संबंधित बुनियादी कानून हैं। वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम, 1971 और जैव विविधता अधिनियम, 2002 जैव विविधता, बौद्धिक संपदा अधिकार और पहुंच तथा लाभों की साझेदारी की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

बुनियादी बदलाव : वनों और प्रकृति के संरक्षण के नये तौर-तरीकों के तहत परिस्थितिकीय प्रणाली के प्रबंधन, जैव विविधता, प्रतिभागितापूर्ण प्रबंधन, टिकाऊ आजीविका, पारिस्थितिकीय तंत्र संबंधी सेवाओं के रखरखाव और हरे-भरे पेड़ों को काटने पर प्रतिबंध जैसे उपायों पर जोर दिया जा रहा है ताकि देश में 33 प्रतिशत भूभाग को वनाच्छादित बनाने के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। इसके साथ ही राष्ट्रीय प्राथमिकताओं और स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करने और वैश्विक प्रतिबद्धताएं पूरी करने के भी प्रयास जारी हैं। इस समय देश के करीब 25 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के वन हैं। इसके अलावा वनों के अलावा भी अन्य इलाकों में पेड़ हैं। भारत में संरक्षित वन क्षेत्र का विस्तृत नेटवर्क

चित्र 4 : तानसा अभयारण्य और जंगल का जलग्रहण क्षेत्र

भी बना लिया है और फिलहाल देश का 5 प्रतिशत क्षेत्र संरक्षित क्षेत्र के तहत आता है। वन संरक्षण के विभिन्न कार्यक्रमों के तहत विभिन्न देशव्यापी गतिविधियां संचालित की जाती हैं जिनसे लक्ष्यों को प्राप्त करने में बड़ी मदद मिली है। वानिकी/वन्य जीव अनुसंधान, शिक्षा और प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय स्तर की कई संस्थाएं गठित की गयी हैं ताकि इस क्षेत्र में क्षमता का निर्माण किया जा सके।

जल संसाधनों का संरक्षण : भारतीय संविधान की संघीय व्यवस्था में कई राज्यों से होकर बहने वाली नदियों का विनियमन और विकास की ज़िम्मेदारी संघीय सरकार के वैधानिक अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत आती है। राज्यों के अधिकार क्षेत्र में जल आपूर्ति, सिंचाई और नहरों, गंदे पानी की निकासी और जल सचयन जैसे कार्य शामिल हैं। भूमि और भूमि के उपयोग से संबंधित मामलों की ज़िम्मेदारी भी राज्यों पर है। स्वतंत्रता के बाद देश ने जल संसाधनों के विकास की प्राथमिक आवश्यकता को पूरा करने की ओर ध्यान दिया है और शुष्क क्षेत्रों में कृषि के विस्तार और खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लक्ष्य को हासिल करने में काफी कामयाबी मिली है। बड़ी संख्या में सिंचाई परियोनाओं को पूरा किया गया है जिससे देश में अनेक बहु-उद्देश्यीय बांध, जलाशय, नहरें और तालाब बनाए गये हैं। भूमिगत जल स्रोतों का उपयोग करके पेय जल की आपूर्ति भी बढ़ाई गयी है। जल संसाधनों की संख्या में भी शानदार बढ़ोतरी हुई है। भारत का करीब दो तिहाई कृषि क्षेत्र बारानी खेती के तहत आता है और सिंचाई क्षमता के विस्तार की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए भारत ने बारानी खेती वाले इलाकों में पानी की आपूर्ति बढ़ाने के लिए जलसंभर विकास दृष्टिकोण अपनाने और इसपर अमल करने का फैसला किया है। पिछले दशकों में देश में समन्वित जलसंभर प्रबंधन कार्यक्रमों पर अमल का अच्छा खासा अनुभव प्राप्त कर लिया है।

चिरस्थायी विकास के लिए योगदान

पिछले अनुभवों से यह बात अच्छी तरह स्पष्ट हो गयी है कि भूमि के उपयोग के जितने भी प्रकार होते हैं उनमें से वन भूमि का भूतलीय जल और भूमिगत जल सबसे स्वच्छ और सबसे स्थायी होता है। इस तरह के पानी के बहाव की मात्रा, गुणवत्ता और अवधि वन प्रबंधकों द्वारा घटाई-बढ़ाई जा सकती है। इन निष्कर्षों से यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि वनों और स्वच्छ पेयजल की पारिस्थितिकीय प्रणाली के बीच आपसी संबंध हैं। दोनों ही तरह की पारिस्थितिकीय प्रणालियों से चिरस्थायी विकास लक्ष्यों के बारे में संयुक्त राष्ट्र की कार्यसूची को लागू करने में काफी मदद मिलती है जिसमें सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिकीय खुशहाली के मानदंडों के जटिल और आपस में संबंधित स्वरूप की झलक मिलती है। हाल के वर्षों में भारत ने विकास के अपने मार्ग को भोजन, पानी और ऊर्जा सुरक्षा तथा आर्थिक विकास, आपदा के प्रति संवेदनशीलता और गरीबी उन्मूलन की प्राथमिकताओं को ध्यान में रखकर पुनर्निधारित किया है। ऐसा करते हुए प्राकृतिक संपदा के संरक्षण के साथ-साथ लोकतांत्रिक तरीके से संचालित पारदर्शी और मजबूत प्रशासन की आवश्यकता का भी ध्यान रखा गया है।

पानी से संबंधित चिरस्थायी विकास लक्ष्य-एसडीजी (एसडीजी 6) और भूमि से संबंधित एसडीजी (एसडीजी 15) स्पष्ट रूप से यह बात स्वीकार करते हैं कि वनों और पानी के बीच सीधा संबंध है। इतना ही नहीं एसजीडी 6 और एसजीडी 15 का अन्य एसडीजी के साथ सुदृढ़ अंतर्संबंध है। इस तरह पारिस्थितिकीय प्रणाली के प्रबंधन, चिरस्थायी वन प्रबंधन, जैव विविधता संरक्षण और जल संसाधनों को लेकर अपनायी गयी नीति कारगर व कुशल नीति से अन्य चिरस्थायी विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद मिलने के साथ-साथ चिरस्थायी समग्र विकास और वैश्विक वचनबद्धताओं को पूरा करने में भी मदद सकती है। □

प्रकृति है अनमोल

सीमा कुलश्रेष्ठ

ज़रा कल्पना कीजिए कि आप एक घने छायादार वृक्ष के नीचे खड़े सुबह की ताज़ी हवा का आनंद ले रहे हैं, अचानक कहीं से आवाज आती है, "आप की मुफ्त वायु-सेवा की समय-सीमा समाप्त हो चुकी है, आगे की ताजी हवा के लिए आपको 100 रुपये प्रति मिनट के अनुसार अग्रिम-राशि जमा करवानी होगी। कृपया उक्त राशि जमा करवाकर हमारी सेवाओं से स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त करें।" आप सोचेंगे, अरे! यह आवाज इस वृक्ष की है क्या? नींद से जागिए जनाब! वृक्ष मनुष्य की तरह स्वार्थी और व्यवसाय-परक नहीं है। प्रकृति ने तो अनंत-काल से अपनी सेवाओं के बदले मनुष्य तो क्या, किसी भी प्राणी-मात्र से कुछ मांगा ही नहीं। हम सब प्राकृतिक स्रोतों से मुफ्त ही जल-प्रवाह, ऊर्जा, उपजाऊ भूमि, पेड़-पौधों और प्राणियों का जैव-भार उठाने व हम मनुष्यों सहित इन्हें शरण देने जैसे लाभ लगातार उठाते आ रहे हैं। हां, इस लाभ की विशिष्टता व स्वरूप, क्षेत्र-विशेष के भौगोलिक वातावरण तथा इस वातावरण में उपलब्ध प्राकृतिक स्रोतों के अनुसार होता है, जिसे हम पारिस्थितिकी तंत्र कहते हैं। यह पारिस्थितिकी तंत्र यानि इकोसिस्टम, जंगल, घास के मैदान, नदी-तालाब, झील इत्यादि का अपना-अपना व अलग-अलग होता है, यहां तक कि एक एक्वेरियम भी अपने-आप में एक छोटा सा पारिस्थितिकी तंत्र है।

आज के उपभोक्तावादी-युग में, आर्थिक-शक्ति बनने की होड़ में लगा मनुष्य प्रकृति-प्रदत्त सेवाओं का शोषण पृथ्वी की धारणमयी-सीमा या सस्टेनेबल लिमिट व क्षमता से बहुत आगे जाकर करता चला जा रहा है, जिसका अंत बहुत-सी प्राकृतिक आपदाओं के बाद, संपूर्ण धरती का विनाश होगा, यह हम सब जानते हैं। क्या आप जानते हैं, इसी खतरे से बचाने के लिए पर्यावरण-अर्थशास्त्रियों और वैज्ञानिकों ने इसी उपभोक्तावाद में से ही एक मार्ग खोज निकाला है, जो आधुनिक मानव को उसी की भाषा में समझाने का एक नया और श्रेष्ठ प्रयास है, और वह है-- पारिस्थितिकी तंत्र द्वारा प्रदत सेवाएं और उनसे जुड़ा अर्थशास्त्र! इसकी व्याख्या बहुत सरल है- एक पारिस्थितिकी तंत्र द्वारा प्रदत विभिन्न सेवाओं का मूल्यांकन करके सामाजिक, आर्थिक एवं प्राकृतिक संतुलन के परिप्रेक्ष्य में उसके महत्व को समझना तथा स्थानीय समुदाय को समझाना ताकि समय रहते उसे बचाने के संबंध में स्थानीय निकाय व प्रशासन, नीतिगत, कानूनी व वित्तीय मदद इत्यादि पर निर्णय ले सकें।

हमें ठीक तरह से जान लेना चाहिए कि पारिस्थितिकी तंत्र द्वारा प्रदत्त सेवाएं चार प्रकार की होती हैं- प्रथम खाद्य एवं आपूर्ति सेवाएं, दूसरी नियामक सेवाएं, तीसरी सहायक सेवाएं और चौथी सांस्कृतिक सेवाएं। खाद्य और आपूर्ति सेवाएं हमें खाद्य पदार्थों जैसे कृषि-उत्पाद, फल-सब्जियां, मसाले, मांस-मछली, जल, सौर-ऊर्जा, वन-औषधि इत्यादि के रूप में प्राप्त होती हैं, जिनका बड़े पैमाने पर व्यापार आजीविका व रोज़गार के रूप में मनुष्य को आर्थिक संबल पदान करता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि संपूर्ण विश्व में 1.2 बिलियन गरीब जनसंख्या में से 900 मिलियन जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों की है और ये सभी अपनी आजीविका हेतु प्राकृतिक स्रोतों पर निर्भर करते हैं, अन्य आय के स्रोतों तक उनकी पहुंच बहुत सीमित है। पारिस्थितिकी तंत्र संतुलन के प्रति अत्यधिक संवेदनशील ये जनसंख्या, किसी भी प्राकृतिक प्रकोप जैसे अनावृष्टि, अतिवृष्टि, अकाल इत्यादि के समय पूर्ण गरीबी अथवा अस्थाई गरीबी की ओर धकेल दी जाती है, जिससे बचने के लिए उनके पास दूर स्थित नगरों की ओर पलायन, आंशिक, दैनिक अथवा पूर्ण आप्रवास की बाध्यता के अतिरिक्त कोई और रास्ता नहीं बचता।

नियामक सेवाएं किसी भी ईकोसिस्टम से प्राप्त होने वाली वे सेवाएं हैं, जो प्रकृति का नियमन करें, जैसे- वायु तथा जल का शुद्धिकरण, परागण, जीवों के पोषक-चक्र, कचरे का निस्तारण आदि। जल-चक्र, ऑक्सीजन चक्र, नाइट्रोजन चक्र, फास्फोरस

लेखिका राजकीय शाकंभर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जयपुर में प्राणी शास्त्र विभाग में प्रोफेसर हैं। ईमेल: drseemakulshreshtha@gmail.com

चक्र, सल्फर चक्र इत्यादि इकोसिस्टम्स की नियामक सेवाओं का अंग हैं। ये पारिस्थितिकी तंत्र के अपने नियमन व स्वास्थ्य को बचाए रखने हेतु सबसे महत्वपूर्ण हैं, इन्हीं पर समस्त जीवित प्राणियों व पेड़-पौधों का अस्तित्व निर्भर करता है। नियामक सेवाएं ही प्रत्येक जीव को ऊर्जा-संचरण या यूं कहें कि जीवन का मूल-प्रवाह देती हैं। इनका मूल्यांकन करने बैठें तो प्रत्येक चक्र के मूल्य को एक प्रोसेसिंग प्लांट के मूल्य के बराबर माना जा सकता है। इनका असंतुलन प्रकृति-प्रदत्त हर प्रकार की सेवा को प्रभावित करता है क्योंकि भले ही हमें इनके प्रत्यक्ष वित्तीय लाभ दिखाई नहीं पड़ते, लेकिन इनके बिगड़ते ही जीवन खतरे में आ जाएगा। हमने इन सेवाओं को भी व्यापार बना कर अपने ताबूत पर स्वयं ही अंतिम कील गाड़ दी है।

प्राकृतिक तंत्र की सहायक सेवाएं भी कम महत्वपूर्ण नहीं। ये हमें, पेड़ -पौधों, जीव-जंतुओं को धरती पर आश्रय अथवा शरण-स्थली के रूप में मिलती हैं। क्योंकि इसमें वित्तीय लाभ जैसी कोई बात नहीं आती, हम इसे कम महत्वपूर्ण समझने की मूर्खता कर रहे हैं। विश्व के अधिकतर देश 50 प्रतिशत प्राकृतिक आवास नैचुरल हैबिटाट खो चुके हैं, नमभूमि का 54 प्रतिशत हिस्सा विकास की भेंट चढ़ा चुके हैं, इसकी धारण क्षमता नष्ट कर चुके हैं। 14.6 मिलियन हेक्टेयर जंगल खत्म हो चुके हैं। उनमें रहने वाले जीव-जंतु एवं पादप प्रजातियों की भी बड़ी संख्या इसी प्रकार विलुप्त हो गई है। सोचिए कि, कितनी प्रजातियां, जिन्हें मानव ने आज तक नहीं पहचाना होगा, चुपचाप हमेशा के लिए विलुप्त हो गई होंगी?

इसी प्रकार पारिस्थितिकी तंत्र से अप्रत्यक्ष लाभ प्रदान करने वाली अन्य महत्वपूर्ण सेवाएं सांस्कृतिक सेवाएं हैं। सांस्कृतिक सेवाएं वे सुख हैं जो प्रकृति के सान्निध्य में हम पाते आए हैं, जैसे आध्यात्मिक, ऐतिहासिक, बौद्धिक व वैज्ञानिक धरोहरें जो पारिस्थितिकी तंत्र का हिस्सा हैं, ईकोसिस्टम में स्थित मंदिर, आदिवासी मेले, नैसर्गिक सौंदर्य और उनसे मिलने वाली आध्यात्मिक व मानसिक शांति, मनुष्य का इतिहास, जन-जातियां व उनसे जुड़े हस्तशिल्प, पुरातन ज्ञान, शिक्षा और प्रशिक्षण तथा इसके लिए इकट्ठे किए गए आंकड़े।

इसके अलावा, हर सेवा पर एक तय वैकल्पिक मूल्य भी होता है, यह पारिस्थितिकी तंत्र का वह मूल्य है जो भविष्य में इसके उपयोग की संभावनाओं पर आधारित होता है, चाहे वर्तमान स्थिति जो भी हो। यह वर्तमान में पारिस्थितिकी तंत्र के भू-उपयोग परिवर्तन को रोकने में सहायता करता है।

पारिस्थितिकी तंत्र की सेवाओं के मूल्यांकन की विधियां व तकनीकें वैज्ञानिक व विश्वसनीय हैं, यह मूल्यांकन समाजशास्त्रियों, शिक्षाविदों, अर्थशास्त्रियों व पर्यावरणविदों द्वारा संयुक्त रूप से किया जाता है। इन सेवाओं

कई विद्वानों के मतों व मंथन-चिंतन से एक तथ्य तो बिल्कुल साफ है कि हम अज्ञानी कालिदास की तरह अपनी ही कुल्हाड़ी से उस डाली को काट रहे हैं जिस पर हम बैठे हैं। तो क्यों न कालिदास के जागृत व ज्ञानी व्यक्तित्व-परिवर्तन की तरह मनुष्य स्वयं को जगा ले और, आज जो भी पारिस्थितिकीय-तंत्र बचे हुए हैं, उन्हीं को भविष्य के लिये बचाने का प्रयास करे, संतुलित व संयमित ढंग से प्रकृति और पारिस्थितिक-तंत्रों की सेवाओं का लाभ उठाकर अनंत काल तक स्वयं के अस्तित्व को बनाये रखे।

के इस मूल्यांकन से पहले हमारे समक्ष अनेक चुनौतियां हैं, जैसे अज्ञानता, लापरवाही, अनुभवहीनता, दूरदृष्टि में कमी, सूचनाओं की कमी, आर्थिक और पर्यावरणीय नीतियों का विफल रहना, कानून व नीतियों का सख्ती से पालन न होना, जनसंख्या-वृद्धि व राजनैतिक इच्छा-शक्ति की कमी इत्यादि।

यह समझना भी अनिवार्य है कि आखिर पारिस्थितिकी तंत्र का मूल्यांकन कर हम चाहते क्या हैं? क्यों यह आज के संदर्भ में इतना उपयोगी है कि जनसाधारण तक यह लोक-विज्ञान पहुंचाया जाए? प्रायः ऐसा देखा जाता है कि विकासशील परियोजनाओं को लागू करते समय, भू-उपयोग परिवर्तन करते समय, नदी-नालों के जल प्रवाह को रोकते या मार्ग परिवर्तन करते समय इन प्राकृतिक-संसाधनों की केवल मार्केट वैल्यू अथवा वित्तीय लाभ का ही आंकलन किया जाता है, उस क्षेत्र के पारिस्थितिकी तंत्र के कुल आर्थिक मूल्य की तरफ तो आंख उठाकर भी नहीं देखा जाता, जबकि यह एक शक्तिशाली टूल होने के साथ-साथ पारिस्थितिकी तंत्र के महत्व का एक जबरदस्त साक्ष्य है, जिसे नीति-निर्धारकों, सरकार व कानून के समक्ष रख कर भू-उपयोग व गैर-सतत या अनसस्टेनेबल विकासोन्मुखी परिवर्तन को रोका जा सकता है। यही नहीं, स्थानीय समुदायों की आजीविका अथवा व्यापार, जो पारिस्थितिकी तंत्र की सेवाओं की सतत (सस्टेनेबल) क्षमता से भी कहीं अधिक अविवेकपूर्ण दोहन पर आधारित है, को भी चुनौती दी जा सकती है। स्थानीय समुदायों को इस मूल्यांकन में भागीदारी व निर्णयों में शामिल किया जा सकता है ताकि समझाया जा सके कि वे किस मूल्य पर पैसा कमा रहे हैं? हमारी आने वाली पीढ़ियों हेतु विनष्ट पारिस्थितिकी तंत्र की विरासत छोड़ कर जाने के मूल्य पर ?

अंधाधुंध विकास अथवा पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण! यह सवाल अब अतिज्वलंत है। दोनों में से किसी एक का चयन करना हो तो हम इस उभरते हुए नए जैविक-विकल्प पर कि हर प्राकृतिक-दोहन, विकास, व्यापार और बदलाव से पहले पारिस्थितिकी तंत्र का मूल्यांकन भी न केवल आवश्यक है वरन, हमारे अपने अस्तित्व को बनाये रखने का ठोस आधार भी है, चिंतन और अध्ययन अवश्य कर लें। कई विद्वानों के मतों व मंथन-चिंतन से एक तथ्य तो बिल्कुल साफ है कि हम अज्ञानी कालिदास की तरह अपनी ही कुल्हाड़ी से उस डाली को काट रहे हैं जिस पर हम बैठे हैं। तो क्यों न कालिदास के जागृत व ज्ञानी व्यक्तित्व-परिवर्तन की तरह मनुष्य स्वयं को जगा ले और, आज जो भी पारिस्थितिकीय-तंत्र बचे हुए हैं, उन्हीं को भविष्य के लिये बचाने का प्रयास करे, संतुलित व संयमित ढंग से प्रकृति और पारिस्थितिक-तंत्रों की सेवाओं का लाभ उठाकर अनंत काल तक स्वयं के अस्तित्व को बनाये रखे। ❑

विकास और ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती का ताल-मेल

रितु माथुर, गरिमा वत्स, स्वप्निल शेखर

भारत की प्रति व्यक्ति जीडीपी (सकल घरेलू उत्पाद) 1965 डॉलर है, जबकि इससे जुड़ा विश्व स्तर पर औसत आंकड़ा 10,363 डॉलर है। प्रति व्यक्ति जीडीपी के इस आंकड़े के साथ भारत का मानव विकास सूचकांक (एचडीआई) 0.64 है और इस मामले में भारत 189 देशों की सूची में 130वें पायदान पर है। दुनिया की तेजी से बढ़ रही अर्थव्यवस्थाओं में से एक होने के बावजूद भारत के 12 फीसदी घरों में साफ पानी की उपलब्धता जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव है और 55 फीसदी घर कच्चे हैं। यहां तक कि 2011-12 में भी 53 फीसदी घरों में खाना पकाने के लिए लकड़ी का इस्तेमाल होता था। साल 2015-16 में देश में प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत वैश्विक औसत का महज पांचवा हिस्सा यानि 20 फीसदी थी, जो ऊर्जा की मौजूदा स्थिति और इसे खरीदने की लोगों की क्षमता के बारे में काफी कुछ बताती है। इन आंकड़ों को देखते हुए कहा जा सकता है कि भारत को अपनी आबादी के लिए बेहतर जीवन स्तर हासिल करने की खातिर आधारभूत संरचना को काफी हद तक सुधारने की जरूरत है।

पारंपरिक तौर देखा जाए तो वैश्विक स्तर पर ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में विकसित देशों की बड़ी हिस्सेदारी है, क्योंकि ये देश अपनी आधारभूत संरचना का औद्योगीकरण और विकास पहले ही कर चुके हैं। हाल के वर्षों में गैर-ओईसीडी देशों में आर्थिक विकास के रफ्तार पकड़ने के साथ ओईसीडी और गैर-ओईसीडी देशों में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन की हिस्सेदारी की स्थिति उलट गई है। यह हिस्सेदारी 2017 में क्रमश: 37.2 और 62.8 फीसदी हो गई, जबकि 1960 में यह आंकड़ा क्रमश: 61 और 39 फीसदी था। गैर-ओईसीडी देशों के उत्सर्जन में भारत और चीन की हिस्सेदारी 55 फीसदी है। साल 2017 के आंकड़ों के मुताबिक, इसमें चीन की हिस्सेदारी 44 फीसदी थी, जबकि भारत का हिस्सा 11 फीसदी था।

साल 1994 से 2014 के दौरान भारत से जुड़े ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन (जमीन के इस्तेमाल में बदलाव और जंगल को छोड़कर) में तकरीबन 115 फीसदी की बढ़ोतरी हुई और इसमें अधिकांश हिस्सेदारी ऊर्जा क्षेत्र की रही। भारत में 1994 में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में ऊर्जा क्षेत्र की हिस्सेदारी 61.3 फीसदी थी, जो 2010 में बढ़कर 70.7 फीसदी हो गई। साल 1994 से 2014 के दौरान प्रति व्यक्ति ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन का आंकड़ा 56.4 फीसदी तक बढ़कर 1.3 टन कार्बन डाइऑक्साइड प्रति व्यक्ति से बढ़कर 2 टन कार्बन डाइऑक्साइड प्रति व्यक्ति हो गया, जो अभी भी मौजूदा वैश्विक औसत से आधे से भी कम है।

1.5 डिग्री से. के असर और उत्सर्जन से जुड़ी हालिया आईपीसी की विशेष रिपोर्ट में साफतौर पर कहा गया है कि इस लक्ष्य के लिए जिस स्तर और रफ्तार के हिसाब से बदलाव की जरूरत होगी, जाहिर तौर पर 2 डिग्री से. के स्तर के लिए ऐसी जरूरत नहीं होगी।

दुनिया भर में राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर तेज और दूरगामी बदलावों की जरूरत होगी।

> भविष्य में ऊर्जा की जरूरतों में बढ़ोतरी को नियंत्रित करने के लिए इस क्षेत्र में भारत के मौजूदा बदलाव की प्रक्रिया को दक्षता बढ़ाने से जोड़ने की जरूरत है। साथ ही, प्रदूषणकारी गैसों के उत्सर्जन को रोकने के लिए यथासंभव स्वच्छ ऊर्जा की तरफ आगे बढ़ने की आवश्यकता है। इसी के मुताबिक, हम अब सौर और पवन ऊर्जा की तरफ बदलाव का दौर देख रहे हैं

अत: यह साफ है कि एक तरफ जहां तेज और समावेशी विकास देश के लिए अहम प्राथमिकता है और दूसरी तरफ भारत पर टिकाऊ विकास को ध्यान में रखते हुए काम करने का दबाव भी है। दरअसल, जलवायु परिवर्तन से जुड़े मसलों की अहमियत वैश्विक स्तर पर लगातार बढ़ती

रितु माथुर द एनर्जी ऐंड रिसर्च इंस्टीट्यूट (टेरी) के सेंटर फॉर इंटीग्रेटेड एसेसमेंट ऐंड मॉडलिंग में निदेशक हैं। गरिमा वत्स टेरी की इसी ईकाई में सलाहकार और स्वप्निल शेखर रिसर्च एसोसिएट हैं। ईमेल: ritum@teri.res.in

जा रही है।

भारत के मौजूदा ऊर्जा संबंधी बदलाव में क्या खास है?

भारत में ऊर्जा संबंधी परिवर्तन की परिकल्पना नई नहीं है- देश में विकास और मुख्य राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के आधार पर ऊर्जा से जुड़े अलग-अलग विकल्पों के तौर पर बदलाव को अंजाम देने का इतिहास रहा है। भारत की आजादी के बाद राष्ट्रीय नियोजन के शुरुआती वर्षों में मुख्य ध्यान सामाजिक-आर्थिक विकास और ऊर्जा नीतियों पर था। इसके तहत पर्याप्त आपूर्ति और आधारभूत संरचना प्राथमिकता के केंद्र में थे। इसके बाद के वर्षों में ऊर्जा क्षेत्र में धीरे-धीरे बदलाव हुआ और बायोमास जैसे पारंपरिक इस्तेमाल से मामला आगे बढ़कर कोयला और पेट्रोलियम उत्पादों जैसे ऊर्जा के आधुनिक स्वरूप तक पहुंच गया। 1970 के दशक में पंचवर्षीय योजनाओं का फोकस ऊर्जा की उपलब्धता पर था, जबकि 1980 में यह मामला राष्ट्रीय ऊर्जा सुरक्षा तक पहुंच गया। इसी तरह, 1990 के दशक में पूरा फोकस ऊर्जा आधारभूत संरचना के आधुनिकीकरण पर रहा। इन वर्षों के दौरान ऊर्जा क्षेत्र में उच्च स्तर पर विद्युतीकरण की तरफ बदलाव देखने को मिला और जलविद्युत प्रणाली की तुलना में थर्मल पावर यानि कोयले से बिजली तैयार संबंधी गतिविधियों की हिस्सेदारी बढ़ी और ऊर्जा की आपूर्ति में तेजी से बढ़ोतरी देखने को मिली। धीरे-धीरे ऊर्जा सुरक्षा का दायरा महज राष्ट्रीय स्तर पर सुरक्षा से परे जाकर उपलब्धता संबंधी पहलुओं, किफायती दर और दक्षता तक पहुंच गया। भारत की 11वीं (2007-12) और 12वीं पंचवर्षीय योजनाओं (2012-17) ने 'तेज, सतत और ज्यादा समावेश विकास' के लिए व्यापक नजरिया पेश किया और पर्यावरण संबंधी अनुकूलता का भी साफतौर पर जिक्र किया गया।

भविष्य में ऊर्जा की जरूरतों में बढ़ोतरी को नियंत्रित करने के लिए इस क्षेत्र में भारत के मौजूदा बदलाव की प्रक्रिया को दक्षता बढ़ाने से जोड़ने की जरूरत है। साथ ही, प्रदूषणकारी गैसों के उत्सर्जन को रोकने के लिए यथासंभव स्वच्छ ऊर्जा की तरफ आगे बढ़ने की आवश्यकता है। इसी के मुताबिक, हम अब सौर और पवन ऊर्जा की तरफ बदलाव का दौर देख रहे हैं।

साल 2015 में पेरिस समझौते के बाद जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने के लिए वैश्विक स्तर पर सक्रियता को देखते हुए भारत ने इस सिलसिले में साल 2030 तक अपना राष्ट्रीय निर्धारित योगदान (एनडीसी) लक्ष्य तय

किया था, जिसे तीन प्रमुख लक्ष्य हैं:

1. 2005 के स्तर से उत्सर्जन तीव्रता को घटाकर जीडीपी का 30-35 फीसदी तक करना।
2. गैर-जीवाश्म ईंधन साधनों पर आधारित कुल 40 फीसदी विद्युत ऊर्जा क्षमता हासिल करना, जिसमें तकनीक के अंतरराष्ट्रीय हस्तांतरण और सस्ते वित्त का योगदान हो।
3. अतिरिक्त वन और पेड़ों के जरिये 2.5-3 अरब टन का अतिरिक्त कार्बन सिंक तैयार करना।

एनडीसी के 3 लक्ष्यों में पहले दो ऊर्जा क्षेत्र से जुड़े हैं, जो भारत में प्रदूषणकारी गैसों के उत्सर्ज में कमी को हासिल करने में इस क्षेत्र की अहम भूमिका बारे की तरफ इशारा करता है।

ऐतिहासिक स्तर पर उत्सर्जन का कम स्तर होने के बावजूद भारत आज ऐसे मुहाने पर खड़ा है, जहां उस पर ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के साथ-साथ अपने आर्थिक विकास को बढ़ाने और ऊर्जा व सेवाओं की उपलब्धता मुहैया कराने के लिए भारी दबाव है। ज्यादातर देशों ने अतीत में ऐसे वक्त में अपने विकास अभियान से उत्सर्जन को अलग किया, जब तेज विकास और औद्योगीकरण की जरूरत पहले ही पूरी हो चुकी थी। साथ ही, कोई भी अन्य देश कम से कम 4,000 किलोवाट प्रति व्यक्ति बिजली खपत सालाना या इससे ज्यादा के बिना 0.9 एचडीआई हासिल करने नहीं कर सका है।

ऐसे में भारत अलग स्थिति में है, जहां आने वाले वर्षों में बदलाव की प्रक्रिया को ज्यादा अभिनव और संपूर्ण बनाने की जरूरत होगी। साथ ही, विकास के लक्ष्यों की दिशा में काम करने के दौरान पर्यावरण का भी खयाल रखना होगा।

टेरी के अध्ययन के तहत ऊर्जा क्षेत्र से जुड़े कुछ परिदृश्यों के विश्लेषण के आधार पर कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन को कम करने में जिन तीन चीजों का योगदान हो सकता है, उनमें ऊर्जा दक्षता के स्तर में सुधार, सौर और पवन ऊर्जा जैसे अक्षय ऊर्जा के साधनों के जरिये ऊर्जा क्षेत्र में कार्बन के स्तर को कम करना और ऊर्जा के इस्तेमाल में विद्युतीतरण की भूमिका में बढ़ोतरी शामिल हैं।

देश के सतत विकास में ऊर्जा दक्षता की भूमिका को आसानी से समझा जा सकता है। दरअसल, ऊर्जा में कमी का जो भी लक्ष्य हासिल किया जाता है, उससे सीधे तौर पर तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था में ऊर्जा और आधारभूत संरचना संबंधी दबाव कम होता है। इसके परिणामस्वरूप देश में ऊर्जा या प्रदूषणकारी गैसों के उत्सर्जन में कमी होती है।

हाल के एक आकलन से पता चलता है कि ऊर्जा की मांग से जुड़े तमाम क्षेत्रों में सिर्फ ऊर्जा दक्षता संबंधी सुधार से साल 2014 तक ऊर्जा की मांग में कम से कम 12 फीसदी तक कटौती की जा सकती है। ऊर्जा दक्षता की सबस ज्यादा गुंजाइश औद्योगिक क्षेत्रों (खासतौर पर लौह और इस्पात, एमएसएमई क्षेत्र) में है। इसके बाद परिवहन क्षेत्र, व्यावसायिक क्षेत्र (खासतौर पर दुकानों और मॉल) और आवासीय क्षेत्र (जगह और लाइट से जुड़ी स्थिति) में गुंजाइश है।

देश में धूप की प्रचुरता और सौर तकनीक की तेजी से विकास के कारण सौर ऊर्जा की दिशा में आगे बढ़ना भारत के लिए हर तरह से फायदेमंद विकल्प है। आज अक्षय ऊर्जा (खासतौर पर सौर) की लागत में काफी कमी आई है और यह जीवाश्म आधारित ऊर्जा से लागत के मामले में प्रतिस्पर्धा कर सकता है। अनुमान है कि अक्षय ऊर्जा (भंडारण के साथ) साल 2030 तक व्यावसायिक स्तर पर व्यावहारिक विकल्प बन जाएगा और सौर व पवन ऊर्जा संबंधी चुनौतियां काफी हद तक दूर हो जाएंगी।

इसके अलावा, यह भी साफ है कि ऊर्जा क्षेत्र में कार्बन की हिस्सेदारी कम होने से भारत खाना पकाने और परिवहन की जरूरतों के लिए

विद्युतीकरण की दिशा में आसानी से आगे बढ़ सकता है। स्वच्छ आधुनिक ईंधन की तरफ बढ़ने के लिए पहले एलपीजी/पीएनजी की तरफ बढ़ने के बजाय कुछ मामलों में सीधा बिजली के चूल्हे का उचित उपयोग शुरू करना काफी फायदेमंद हो सकता है। इसी तरह, अगर हमारा देश सीएनजी जैसे ईंधन की तरफ बदलाव करने के बजाय सीधे तेजी से इलेक्ट्रिक वाहनों को अपनाता है तो हम एक ही साथ शहरों में स्थानीय वायु प्रदूषण की दिक्कत से भी निपट सकते हैं। हालांकि इलेक्ट्रिक गाड़ियों को व्यापक स्तर पर अपनाना सिर्फ बैटरी तकनीक में बेहतरी पर आधारित नहीं है, बल्कि इसकी चार्जिंग जरूरतों के लिए आधारभूत संरचना में भी सुव्यवस्थित तरीके से बदलाव करना होगा।

इसके अलावा, वैश्विक स्तर पर अक्षय ऊर्जा की अनियमितता की दिक्कत को प्राकृतिक गैस के जरिये दूर किया गया है और भारत भी अक्षय ऊर्जा की तरफ बढ़ने की प्रक्रिया के दौरान तात्कालिक तौर पर अपने मौजूदा कोयला आधारित संयंत्रों से मदद हासिल कर सकता है। हालांकि, कोयले की तुलना में गैस अपेक्षाकृत स्वच्छ जीवाश्म ईंधन होता है, लेकिन हाल के विश्लेषण के मुताबिक ऊर्जा क्षेत्र में इस वक्त गैस आधारित आधारभूत संरचना खड़ा करने के बजाय कोयले से सीधे अक्षय ऊर्जा की तरफ बढ़ना ज्यादा समझदारी होगी।

भारत में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के अभियान को तेज करने की संभावनाओं का आकलन करते वक्त दो पहलुओं पर सावधानीपूर्वक विचार करने की जरूरत है।

पहला, आर्थिक रूप से व्यावहारिक तकनीकी विकल्पों पर गौर करने की जरूरत है, कुछ विकल्प तो मौजूद हैं और इनका देश में पहले से बेहतर तरीके से इस्तेमाल किया जा रहा है। इन पसंदीदा विकल्पों की राह और सुगम बनाने के लिए नीतियां बनाई जा रही हैं। ऊर्जा के ये विकल्प (खासतौर पर सौर और पवन जैसे अक्षय ऊर्जा के संसाधनों पर आधारित) या कम ऊर्जा की खपत करने वाले अप्लायंसेज दीर्घकालिक अवधि में उपभोक्ताओं को व्यक्तिगत स्तर पर और बड़े पैमाने पर अर्थव्यवस्था को काफी आर्थिक लाभ पहुंचा सकते हैं हालांकि, इससे जुड़ी आधारभूत संरचना को तैयार करने के लिए आमतौर पर तत्काल बड़ी पूंजी की जरूरत होती है। लिहाजा अगर इन विकल्पों को बड़े पैमाने पर अपनाया जाना है तो इनकी वित्तीय जरूरतों पर ध्यानपूर्वक विचार करना होगा। हाल के एक अनुमान के मुताबिक भारत को सिर्फ अपने विकास संबंधी

भारत के ऊर्जा क्षेत्र में बदलाव के लिए जहां तकनीकी विकल्प और समाधान मौजूद हैं, वहीं इस मामले में कई चुनौतियां भी हैं, जिनसे भारत के सामाजिक-आर्थिक माहौल को ध्यान में रखते हुए उचित नीतियों और उपायों के जरिये निपटना होगा।

लक्ष्यों को पूरा करने के लिए साल 2040 तक तक 4.5 लाख करोड़ डॉलर की जरूरत होगी। इसे ध्यान में रखते हुए यह जरूरी है कि देश कार्बन की कटौती वाले रास्ते पर आगे बढ़ते हुए विकास संबंधी खर्चों से समझौता नहीं करे। दोनों लक्ष्यों को एक साथ सुगमता से हासिल किया जा सके, यह सुनिश्चित करने के लिए फंड के वैकल्पिक और अतिरिक्त साधनों का इंतजाम किया जाना चाहिए।

दूसरा, हालिया विश्लेषण इस बात की तरफ इशारा करते हैं कि उच्च स्तर पर उत्सर्जन को कम करने की दिशा में आगे बढ़ते हुए 2 डिग्री से. वाली दुनिया के लक्ष्य के लिए शायद मौजूदा तकनीक पर्याप्त हो, लेकिन जब तक बैटरी स्टोरेज की सुविधा बड़े पैमाने पर उपलब्ध नहीं होती, तब तक 1.5 डिग्री से. का लक्ष्य हासिल करना मुश्किल हो सकता है। इसी तरह, अगर ऊर्जा उत्पादन क्षेत्र में कार्बन के स्तर को बड़े पैमाने पर कम नहीं किया जाता, तो गाड़ियों के विद्युतीकरण की रफ्तार को तेज करना नुकसानदेह हो सकता है।

इसके अलावा, भारत के ऊर्जा क्षेत्र में बदलाव के लिए जहां तकनीकी विकल्प और समाधान मौजूद हैं, वहीं इस मामले में कई चुनौतियां भी हैं, जिनसे भारत के सामाजिक-आर्थिक माहौल को ध्यान में रखते हुए उचित नीतियों और उपायों के जरिये निपटना होगा। ऊर्जा दक्षता यानि इसकी खपत को नियंत्रित करने के लिए सिर्फ तकनीक उपाय पर्याप्त नहीं होंगे और इसके लिए लोगों के व्यवहार में भी बदलाव की जरूरत होगी। लिहाजा, नए कारोबारी मॉडल और रणनीति के जरिये इस तरह के विकल्पों को चुनने के लिए उपभोक्ताओं को प्रेरित करना जरूरी है। अक्षय ऊर्जा को बड़े पैमाने पर अपनाने के साथ ग्रिड में भी सुधार करना होगा।

औद्योगिक क्षेत्र में ऊर्जा दक्षता (बचत) को बढ़ावा देने के लिए भारत की 8 प्रमुख औद्योगिक इकाइयों ने पीएटी कार्यक्रम के पहला चक्र के तहत अपने लक्ष्य से ज्यादा बेहतर प्रदर्शन किया। हालांकि, आसान लक्ष्य पहले ही हासिल किए जा चुके हैं, लिहाजा अतिरिक्त बचत का लक्ष्य हासिल करना अब शायद उतना आसान नहीं हो। ऊर्जा दक्षता तकनीकों को अपनाने के लिए सबसे बड़ी चुनौती शायद सूक्ष्म, लघु और मध्यम इकाइयों (एमएसएमई) की तरफ से देखने को मिले। इस क्षेत्र में छोटे और ज्यादा विकसित संयत्र नहीं होने और बिजली पर इसकी सीमित निर्भरता के कारण यहां पर बिजली की बचत के लिए सीमित गुंजाइश है। इन उद्योगों के पास बेहतर तकनीक को अपनाने के लिए पूंजी और प्रोत्साहन का भी अभाव है।

परिवहन क्षेत्र जैसे अन्य मामलों में आर्थिक रूप से व्यावहारिक विकल्पों की उपलब्धता में तकनीकी दिक्कतें हैं। उड्डयन क्षेत्र में इस्तेमाल होने वाले विमान ईंधन (एटीएफ) और जहाजरानी और सड़कों से जुड़े भारी मालवाहकों के लिए उपयोग होने वाले ईंधन का विकल्प पायलट स्तर पर सामने आया है, लेकिन यह अभी भी ये विकल्प व्यापक स्तर पर उपलब्ध नहीं हो पाए हैं।

ऐसे कई अभिनव उदाहरण मौजूद है, जिनके जरिये भारत ने ऊर्जा दक्षता संबंधी बदलाव की प्रक्रिया को अपनाया है। तकनीकी हल की कीमतों को कम करने के लिए मांग का एकत्रीकरण ऐसा ही एक उदाहरण है, जिसे एलईडी बल्बों और कपड़ा उद्योग से जुड़ी एमएसएमई इकाइयों के लिए ऊर्जा की बचत करने वाले उपकरणों की खरीद के मामले में अपनाया गया है। हालांकि, भारत को पेरिस समझौते के मुताबिक, वैश्विक तापमान को 2 डिग्री से. से कम करने के महत्वाकांक्षी लक्ष्य को हासिल करने के लिए कई ऐसी रणनीतियों की दरकार है।

जलवायु परिवर्तन को सतत विकास से जोड़ना

भारत जैसे विकासशील देश को उत्सर्जन में कटौती के साथ-साथ कई अन्य चिंताओं से भी निपटने की जरूरत है। जलवायु और कछ प्रमुख सामाजिक निर्धारकों मसलन समानता, निष्पक्षता, गरीबी, स्वास्थ्य, मानवीय सुरक्षा, नैतिक मूल्यों के बीच अंतरसंबंध पूरी तरह से ज्ञात है। विश्व आर्थिक मंच द्वारा एक हालिया लेख में जो तीन सबसे बड़ी चुनौतियों बताई गई हैं, उनमें कौशल विकास और भविष्य के कार्यबल के लिए रोज़गार, ग्रामीण भारत का सामाजिक-आर्थिक समावेशन और सेहतमंद और टिकाऊ भविष्य शामिल हैं।

भविष्य में भारत में ईंधन और तकनीकी

ऊर्जा विकल्पों में बदलाव देखने को मिल सकता है। इस लिहाज से रोज़गार संबंधी पहलू काफी अहम है। अक्षय ऊर्जा जैसी नई तकनीक से नया रोज़गार पैदा होने की संभावना बन सकती है, वहीं दूसरे क्षेत्रों मसलन कोयला आदि क्षेत्र में रोज़गार खत्म भी हो सकते हैं। भारत में कोल इंडिया में रोज़गार में 36 फीसदी की कटौती हुई है। 2002-03 में इस कंपनी में कर्मचारियों की संख्या 5,11,000 थी, जो 2015-16 में घटकर 3,26,000 हो गई।

इन तकनीक, सामाजिक-आर्थिक और भूराजनीतिक स्तरों पर तेज बदलाव के दौर से गुजर रहे हैं और ऐसे में भारत को इसके आर्थिक परिणामों के द्विभाजीकरण का सामना करना पड़ सकता है। मसलन एक तरफ वैसे लोग होंगे जो विकासशील अर्थव्यवस्था से पूरी तरह जुड़े होंगे और दूसरे तरह इससे वंचित लोगों की तादाद होगी। भविष्य की नौकरियों, तनख्वाह और काम की बदलती प्रकृति में यह अंतर काफी स्पष्ट नजर आ सकता है। नौकरियों की संख्या और प्रकृति दोनों मामलों में बदलाव से इन क्षेत्रों में कौशल विकास, नए-कौशल के प्रशिक्षण के लिए समेकित प्रयास करने की जरूरत होगी।

पिछले कुछ साल में भारत में असमानता में भी बढ़ोतरी देखने को मिल रही है। साल 2017 भारत में संपत्ति का गिनी गुणांक 0.83 था और इस तरह से भारत उन देशों की सूची में पहुंच है, जहां असामनता का स्तर काफी ज्यादा है। एनएसएसओ के हालिया खपत संबंधी सर्वे के मुताबिक, गिनी गुणांक से खपत में असमानता में बढ़ोतरी का संकेत मिले हैं, जो शहरी इलाकों में 1993-94 के 0.38 से 2011-12 में 0.38 पर पहुंच गया। ग्रामीण क्षेत्रों में यह 1993-94 में अनुमानित 0.26 था, जो 2011-12 में 0.29 हो गया। अत: विशाल युवा आबादी वाले भारत में रोज़गार के अवसरों के सृजन को भी ध्यान में रखना होगा और देश के विकास में समावेशी विकास सुनिश्चित करना होगा।

इसके अलावा, व्यापक स्तर पर पर्यावरण संबंधी स्थिति में सुधार देखा जा रहा है। वायु प्रदूषण और पानी की कमी जैसे सामाजिक कल्याण से जुड़े मुद्दे स्थानीय स्तर पर जोर-शोर से उठ रहे हैं। अत: भारतीय परिस्थितियों के लिहाज से योजना तैयार करते वक्त वायु प्रदूषण के बढ़ते स्तर, जमीन और पानी की सुरक्षा आदि चीजों को ध्यान में रखना जरूरी है।

निष्कर्ष

कुल मिलाकर, भारत में ऊर्जा संबंधी बदलाव के तहत तकनीक विकास नजरिये का भी खयाल रखने की जरूरत है, जिसमें ऊर्जा के स्वच्छ और दक्ष विकल्पों का दायरा बढ़ाने के लिए आधुनिक उपकरणों और प्रक्रियाओं के साथ तेजी से प्रयास करने की जरूरत है, ताकि देश अक्षम उपकरणों और आधारभूत संरचना की बाधा में घिरा नहीं रह जाए। साथ ही, भारत को सामाजिक विकास के स्तर पर भी चुनौती से निपटने की जरूरत है, जिसके तहत देश के सभी नागरिकों के लिए उच्च स्तर के जीवन स्तर की गुंजाइश बन सके और विकास की तेज रफ्तार के साथ समावेशी पहलू का भी ध्यान रखा जा सके। समाज के सभी तबकों के लिए भरोसमंद और किफायती तरीके से स्वच्छ और आधुनिक ऊर्जा की उपलब्धता, किसानों की आय दोगुनी करने, औद्योगिक आधार आदि मजबूत कर रोज़गार के अवसर पैदा करने, तमाम क्षेत्रों के बीच संपर्क स्थापित करने के लिए भी सावधानीपूर्वक काम करने की जरूरत है, ताकि गैसों के उत्सर्जन को कम करने की रणनीति पूरी तरह से सफल बनाई जा सके। अत: भारत को नीतिगत और संस्थागत स्तरों पर बहुआयामी चुनौतियों से निपटने के लिए अभिनव कारोबारी मॉडल और त्वरित फैसलों के जरिये एकीकृत और समर्पित तरीके से काम करना चाहिए, ताकि समावेशी विकास के लिए चुनौतियों को सफलतापूर्वक अवसरों में बदला जा सके। ❑

जलवायु परिवर्तन : चुनौतियां और अवसर

उर्मि गोस्वामी

पहली अप्रैल को, भारतीय मौसम विभाग ने अप्रैल से जून के मौसम के लिए पूर्वानुमान व्यक्त किया, जिसके अनुसार देश के अधिकांश हिस्सों में औसत तापमान सामान्य से 0.5 डिग्री सेल्सियस और कुछ क्षेत्रों में सामान्य से 1 डिग्री सेल्सियस अधिक रहने की संभावना व्यक्त की गई। यह कोई 1 अप्रैल का मजाक नहीं था। इसके बाद से पारा निरन्तर चढ़ रहा है, जिससे तापमान में वृद्धि के पूर्वानुमान की विश्वसनीयता को बल मिला है।

पिछले गर्मियों के लिए भी सामान्य से अधिक तापमान और लू चलने संबंधी मौसम विभाग की भविष्यवाणी सही साबित हुई थी। वास्तव में, भारतीय मौसम विभाग के पयर्वेक्षण नेटवर्क के आंकड़ों से पता चलता है कि पृथ्वी के तापमान में बढ़ोतरी की प्रवृत्ति को को देखते हुए, 1901 और 2017 के बीच भारत में भी वार्षिक औसत तापमान में महत्वपूर्ण वृद्धि की प्रवृत्ति (0.66 डिग्री सेल्सियस प्रति सौ वर्ष) परिलक्षित होती है। वैश्विक औसत तापमान अब पूर्व औद्योगिक स्तरों से 1 डिग्री सेल्सियस अधिक है।

दुनिया के अन्य हिस्सों की भांति, बढ़ते तापमान और गर्मी भविष्य की समस्याएं नहीं हैं और न ही ये गर्म होते जा रहे ग्रह के प्रभाव हैं। भारत पहले से ही 1 डिग्री सेल्सियस अधिक तापमान के प्रभावों का सामना कर रहा है। ये दुष्प्रभाव उत्तराखंड, चेन्नई, श्रीनगर, मालिन और हाल ही में केरल तथा पूर्वोत्तर भारत, पिछली गर्मियों के दौरान भीषण लू और देश भर में असमान वर्षा के साथ कुछ क्षेत्रों में बाढ़ और कई हिस्सों में गंभीर सूखे की स्थिति के रूप में स्पष्ट तौर पर दिखाई दिए। वैश्विक तापमान में 2015 के पेरिस समझौते में लक्षित "2 डिग्री सेल्सियस से कम" के लक्ष्य की तुलना में कहीं अधिक बढ़ोतरी की आशंका को

जलवायु परिवर्तन के अंतर्गत बढ़ता तापमान, वर्षा होने की प्रक्रिया में परिवर्तन और विषम मौसम घटनाएं शामिल हैं। इसमें और भी बहुत कुछ शामिल है। यह हमारे उपभोग और उत्पादन के तरीके को बदलने से संबद्ध है। इसका संबंध अधिक स्थायी अर्थव्यवस्था बनाने के साथ है। भारत जैसे देश के लिए, एक जलवायु संकटग्रस्त दुनिया में विकास के बैकलॉग को भरना एक वास्तविक और तात्कालिक चुनौती है। हालांकि हम अभी इस संकट से बाहर नहीं निकल सकते

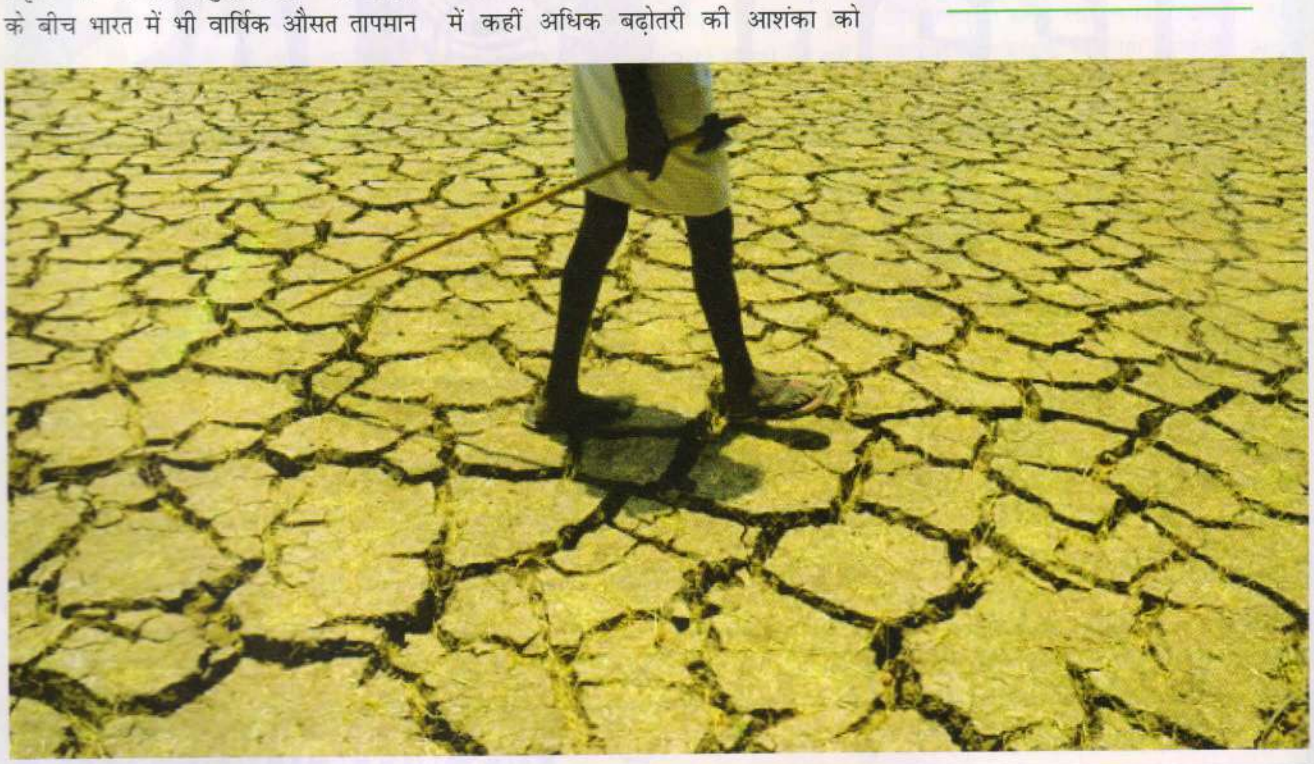

लेखिका द इकोनॉमिक टाइम्स में सहायक संपादक हैं। ईमेल: urmigoswami@timesgroup.com

देखते हुए, लगता है कि पिछले कुछ वर्षों की घटनाएं एक भारी और विस्तारित खतरे को दर्शाती हैं।

जलवायु परिवर्तन से संबद्ध अंतर सरकारी पैनल (आईपीसीसी), संयुक्त राष्ट्र के जलवायु विज्ञान निकाय के वैज्ञानिकों द्वारा पिछले साल अक्टूबर में बुसान, दक्षिण कोरिया से जारी चेतावनी, भारत के लिए पूरी तरह से अप्रत्याशित नहीं है, जिसमें कहा गया था कि ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन यदि वर्तमान दरों पर जारी रहा तो इसके तत्काल और गंभीर परिणाम होंगे।

जलवायु परिवर्तन के लिए अर्थव्यवस्था में व्यापक परिवर्तन लाने की आवश्यकता होगी। भारत को पूरे स्पेक्ट्रम-ऊर्जा, परिवहन, शहरी और कृषि प्रणालियों में नाटकीय परिवर्तन करने की आवश्यकता होगी। भारत को मानव पूंजी, नवाचार और अनुसंधान एवं विकास में निवेश की आवश्यकता होगी। ऊर्जा मिश्रण परिवर्तनों को देखते हुए भारत को ऐसे 500,000 लोगों को फिर से कौशल प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए निवेश करना होगा, जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से कोयला खनन पर निर्भर करते हैं।

धरती के तापमान में 1.5 डिग्री सेल्सियस की बढ़ोतरी संबंधी जलवायु परिवर्तन से संबद्ध अंतर सरकारी पैनल (आईपीसीसी) की विशेष रिपोर्ट पर काम कर रहे वैज्ञानिकों ने निष्कर्ष निकाला कि यदि ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में तेजी से और स्पष्ट कमी नहीं आयी, तो 2040 तक धरती के तापमान में 1.5 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो जाएगी। 1.5 डिग्री सेल्सियस तापमान बढ़ने का मतलब होगा कि मौजूदा तटों के बड़े हिस्से समुद्री में डूब जाएंगे और सूखे और बाढ़ के कारण अरबों लोग सामाजिक और प्राकृतिक मुसीबतों में फंस जाएंगे। यह चेतावनी इस बात को देखते हुए और भी अधिक गंभीर हो जाती है कि पेरिस समझौते के तहत धरती के तापमान में कमी लाने के लिए विभिन्न देशों द्वारा राष्ट्रीय प्रयासों के माध्यम से किए गए प्रतिबद्ध वैश्विक सामूहिक प्रयासों के अनुसार, दुनिया को 2 डिग्री सेल्सियस से अधिक के तापमान वृद्धि के पथ पर डाल दिया है।

हालांकि, तापमान में वृद्धि के प्रतिकूल प्रभाव धरती के लिए कोई अजनबी नहीं है, लेकिन आईपीसीसी की विशेष रिपोर्ट में भारत जैसे संसाधन हीन और कमजोर देशों के लिए एक स्पष्ट संदेश था कि यदि तापमान में वृद्धि यदि 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक होगी तो इसका उन पर सबसे अधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरेस ने इस खतरे के प्रति आगाह करते हुए, पिछले साल न्यूयॉर्क में संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में एक सभा को में कहा कि "जलवायु परिवर्तन हमारे समय का निर्णायक मुद्दा है, और हम एक निर्णायक समय पर हैं। जलवायु परिवर्तन हम से भी अधिक तेजी से आगे बढ़ रहा है-और इसकी गति ने समूची दुनिया को आपात स्थिति का संदेश दिया है। यदि हम 2020 तक अपनी जीवन शैली में उचित बदलाव नहीं करते हैं, तो यह आशंका है कि हम उस अवसर को गंवा देंगे, जहां हम लोगों को और उन सभी प्राकृतिक प्रणालियों को, जो हमारे अस्तित्व के लिए अपरिहार्य हैं, जलवायु परिवर्तन के विनाशकारी दुष्परिणामों से बचा सकते हैं।"

तालिका 1 : धरती के तापमान में बढ़ोतरी का दक्षिण एशिया/भारत पर प्रभाव

	1.5 डिग्री सेल्सियस	2 डिग्री सेल्सियस
औसत तापमान बढ़ोतरी	2.3 डिग्री सेल्सियस	3 डिग्री सेल्सियस
अधिकतम तामान में सबसे अधिक वार्षिक वृद्धि	1.2 डिग्री सेल्सियस	1.7 डिग्री सेल्सियस
तापमान के अधिकतम स्तर पर पहुंचने की आवृत्ति में वृद्धि	160 प्रतिशत	438 प्रतिशत
भारत में 2050 तक भीषण गर्मी में वृद्धि	5 गुणा	9 गुणा
भारत में भीषण गर्मी की अवधि में वृद्धि	2 गुणा	3 गुणा
भीषण लू के दिनों में गर्मी का सामना करने वाली अधिकतम आबादी में बढ़ोतरी	9 गुणा	15 गुणा
औसत बारिश में परिवर्तन	कोई परिवर्तन नहीं	तीन प्रतिशत कमी
मानसून के दौरान अतिवृष्टि की घटनाओं में बढ़ोतरी	20 प्रतिशत	25 प्रतिशत
पानी का संकट झेलने वाली आबादी में वृद्धि	2 करोड़	3 करोड़
नदी बाढ़ से आर्थिक नुकसान में बढ़ोतरी	358 प्रतिशत	546 प्रतिशत

स्रोत : आईपीसीसी एसआर 1.5 एंड कार्बन ब्रीफ

धरती के तापमान में वृद्धि और भारत की स्थिति

यदि धरती के तापमान में वृद्धि 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक होती है, तो जलवायु परिवर्तन की चपेट में आने वाले अपेक्षाकृत गरीब देशों में, भारत सबसे अधिक प्रतिकूल रूप से प्रभावित होगा। अब यह पहले से कहीं अधिक स्पष्ट है कि जलवायु परिवर्तन के कई प्रतिकूल प्रभाव अपरिहार्य हैं। दक्षिण एशिया, विशेष रूप से भारत एक जोखिम का केंद्र है, और ग्रह का तापमान बढ़ने के साथ, उसे अनेक और अतिव्यापी खतरों का सामना करना पड़ेगा। तापमान में 1.5 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि पर भी सूखा और बाढ़, लू के प्रकोप, परिवास में विकृति और फसल पैदावार में कमी जैसे गहन दुष्प्रभाव सामने आएंगे।

बढ़ता तापमान और वर्षा में भिन्नता पानी की आपूर्ति को प्रभावित करेगी। जल संसाधनों पर जलवायु परिवर्तन का समग्र

प्रभाव बाढ़ और सूखे में वृद्धि के रूप में प्रकट होगा। बर्फ पिघलने और समुद्र जल स्तर बढ़ने से आने वाली तटीय बाढ़ और नदियों में आने वाली बाढ़ की तीव्रता और क्षेत्र में वृद्धि होगी। भारत की घनी आबादी वाली 7,500 किलोमीटर लंबी तट रेखा का मतलब होगा कि एक बड़ी आबादी समुद्र के स्तर में वृद्धि और उसके परिणामस्वरूप तटीय बाढ़ से प्रभावित होगी। विशेषज्ञों का कहना है कि इससे 5 करोड़ लोगों पर सीधे दुष्प्रभाव पड़ सकता है, जिनमें से कई अपनी आजीविका के लिए सीधे समुद्र पर निर्भर हैं। मुंबई और कोलकाता जैसे महानगर भी खतरे में होंगे।

जलवायु परिवर्तन की रोकथाम के उपाय

भारत ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन की दर को धीमा करने और पहले से ही अनुभव होने वाले दुष्प्रभावों का समाधान करने के प्रयासों पर आगे बढ़ रहा है।

भारत ने 2008 में, जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना शुरू की थी। आठ मिशन-सौर ऊर्जा, ऊर्जा दक्षता, वानिकी, स्थायी परिवास, जल, कृषि, हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र, और जलवायु परिवर्तन के लिए रणनीतिक ज्ञान विकसित करना-जलवायु परिवर्तन की समस्या के समाधान के लिए बहु-आयामी, दीर्घकालिक और एकीकृत रणनीतियों का आधार हैं। राष्ट्रीय स्तर की एक योजना के अलावा, 32 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों ने राज्य स्तरीय जलवायु कार्य योजनाएं तैयार की है। इन योजनाओं में स्वास्थ्य, उद्योग, आपदा प्रबंधन, पर्यटन और तटीय विकास जैसे क्षेत्रों में कार्यक्रम शामिल हैं, जो ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और व्यापक विकास लक्ष्यों को हासिल करते हुए जलवायु परिवर्तन की समस्याओं के समाधान पर केंद्रित हैं।

परन्तु, प्रगति असमान रही है। अधिकांश प्रयासों को ऊर्जा से संबंधित मिशनों पर केंद्रित किया गया है। हालांकि, राष्ट्रीय कार्य योजनाओं में निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप नीतियों और कार्यक्रमों को संरेखित करने के प्रयास किए जा रहे हैं। वित्तीय और तकनीकी बाधाओं ने राज्य की योजनाओं के प्रभावी कार्यान्वयन में बाधा उत्पन्न की है।

पेरिस समझौते के तहत अपनी प्रतिबद्धताओं के अंतर्गत, भारत ने 2030 तक बिजली उत्पादन की कुल स्थापित क्षमता में गैर-जीवाश्म ईंधन बिजली उत्पादन की हिस्सेदारी 40 प्रतिशत तक बढ़ाने का वायदा किया है। यह जीवाश्म ईंधन, अर्थात् कोयला और गैस से चलने वाले ताप पावर प्लांटों पर आधारित बिजली उत्पादन से भिन्न है, जो सोलर, पवन, हाइड्रो और परमाणु आधारित उत्पादन के रूप में एक महत्वपूर्ण बदलाव है, खास तौर से इसे देखते हुए कि भारत के कुल उत्सर्जन में ऊर्जा क्षेत्र का योगदान 73 प्रतिशत है।

फरवरी 2019 तक, गैर-जीवाश्म ईंधन स्रोतों पर आधारित स्थापित क्षमता, देश की कुल 350.16 जीगावॉट[1] बिजली उत्पादन क्षमता का 36.3 प्रतिशत है, हालांकि पनबिजली और परमाणु जैसे नवीकरणीय और गैर-जीवाश्म ईंधन स्रोतों की हिस्सेदारी में इजाफा हुआ है, परन्तु, बिजली उत्पादन में जीवाश्म ईंधन का उपयोग अभी भी बहुत अधिक मात्रा में किया जा रहा है।

केंद्रीय विद्युत प्राधिकरण के अनुसार 2026-27 तक कुल 619 जीगावाट बिजली उत्पादन जीवाश्म ईंधन, विशेष रूप से कोयले पर निर्भर होगा। नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत कुल स्थापित क्षमता के 275 जीगावाट या 44 प्रतिशत बिजली उत्पादन के लिए जिम्मेदार होंगे, जबकि 263.88 जीगावाट क्षमता जीवाश्म ईंधन (कोयला, लिग्नाइट, और गैस) पर आधारित होगी।[2]

भारत ने 2005 के स्तर से 2030 तक अपने सकल घरेलू उत्पादन की उत्सर्जन गहनता को 33 से 35 प्रतिशत तक कम करने की प्रतिबद्धता भी व्यक्त की है। इससे पहले 2010 में, भारत ने 2005 के स्तर से 2020 तक अपने सकल घरेलू उत्पाद की उत्सर्जन गहनता को 20-25 प्रतिशत कम करने का स्वैच्छिक संकल्प लिया था। 2005

और 2014 के बीच, भारत ने अर्थव्यवस्था की उत्सर्जन गहनता में 21 प्रतिशत की कमी की है। ऑस्ट्रेलिया स्थित प्रमुख वैचारिक संगठन, इंस्टीट्यूट फॉर एनर्जी इकोनॉमिक्स एंड फाइनेंशियल एनालिसिस (आईईईएफए) के एक विश्लेषण से पता चलता है कि भारत द्वारा 2020 तक अपनी ऊर्जा क्षमता और उत्सर्जन गहनता के लक्ष्यों को प्राप्त किए जाने की संभावना है। भारत यह लक्ष्य 2030 की समयसीमा से एक दशक पहले हासिल करने जा रहा है। यह समय-सीमा उसने अपनी राष्ट्रीय विकास परिषद (एनडीसी) में निर्धारित की थी।[3] भारत जीडीपी की उत्सर्जन गहनता को 2005 के स्तर से 2014 तक 21 प्रतिशत नीचे लाने में सक्षम रहा है। इस प्रकार 2 प्रतिशत की औसत वार्षिक दर से, भारत 2030 से लगभग एक दशक पहले अपने पेरिस लक्ष्य को पूरा करेगा।

एक अन्य प्रतिबद्धता 2030 तक अतिरिक्त वन और वृक्षाच्छादन के माध्यम से 2.5 से 3 अरब टन कार्बनडाइऑक्साइड का अतिरिक्त कार्बन सिंक बनाने की है। हालांकि, वानिकी लक्ष्य के संबंध में, भारत की उपलब्धियां उतनी सुदृढ़ नहीं हैं। मिश्रा के अनुसार, ''हमारी प्रतिबद्धता 2.53 अरब टन कार्बनडाइऑक्साइड के अतिरिक्त कार्बन सिंक बनाने की है, जिससे हमारी वर्तमान गति इस लक्ष्य को हासिल करने में थोड़ी मुश्किल हो सकती है।'' लेकिन स्थिति पर ध्यान दिया जा रहा है। ''हम इसके प्रति सचेत हैं, इसलिए एक नई रणनीति तैयार की गई है, और इसे लागू किया गया है, जिसके द्वारा अब से 2030 के बीच यह गति लगभग दोगुनी होने वाली है। इससे लक्ष्य को पूरा करने में मदद करनी चाहिए।''[4]

जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए भारत द्वारा किए गए उपाय

- 2010 में कुल वार्षिक ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन में कार्बनडाइऑक्साइड 2,136 मिलियन टन (1884.3 मिलियन टन भूमि उपयोग, भूमि उपयोग परिवर्तन और वानिकी (एलयूएलयूसीएफ) थी जो 2014 में बढ़कर 2,607.5 मिलियन टन (एलयूएलयूसीएफ) के साथ 2,306.3 मिलियन टन) हो गई।
- 2005-2014 की अवधि में भारत की जीडीपी की उत्सर्जन तीव्रता में 21 प्रतिशत की कमी आई है।
- मार्च 2014 और अगस्त 2018 के बीच सौर संस्थापित क्षमता 2.63 जीडब्ल्यू से लगभग 9 गुना बढ़कर 23.28 जीडब्ल्यू हो गई है।
- बिजली उत्पादन की संस्थापित क्षमता में गैर-जीवाश्म स्रोतों की हिस्सेदारी मार्च 2015 में 30.5 प्रतिशत से बढ़कर जून 2018 में 35.5 प्रतिशत हो गई।
- सुपरक्रिटिकल ताप पॉवर यूनिट्स की संख्या 40 (2015 में 27.48 जीडब्ल्यू क्षमता) से बढ़कर 66 (2018 में 45.55 जीडब्ल्यू क्षमता) तक पहुंच गई हैं, जिनसे 2016-17 में 7 मिलियन टन कार्बनडाइऑक्साइड के उत्सर्जन की बचत हुई।
- उच्च ताप दर और 10.64 गीगावॉट की संचयी क्षमता वाली कुल 170 पुरानी ताप उत्पादन इकाइयां मार्च 2018 तक हटाई गईं।
- इंडिया स्टेट ऑफ फोरेस्ट रिपोर्ट (आईएसएफआर)-2013 के अनुसार वन और वृक्षाच्छादित क्षेत्र कुल भौगोलिक क्षेत्र का 24.01 था जो आईएसएफआर-2017 के अनुसार बढ़कर प्रतिशत 24.39 प्रतिशत हो गया।
- उद्योगों और अन्य ऊर्जा-गहन क्षेत्रों में ऊर्जा दक्षता के लिए 'कार्यनिष्पादन, लक्ष्य और व्यापार (पीएटी) स्कीम के अंतर्गत प्रथम चक्र (अप्रैल 2012 से मार्च 2015) में 478 नामित उपभोक्ताओं को शामिल करते हुए 31 मिलियन टन कार्बनडाइऑक्साइड उत्सर्जन की बचत की गई। पीएटी चक्र दो, तीन और चार का कार्यान्वयन 13 क्षेत्रों के कुल 846 डीसी कर रहे हैं और इनके तहत कार्बनडाइऑक्साइड उत्सर्जन में 19 मिलियन टन की बचत का लक्ष्य रखा गया है।
- भारत ने संयुक्त राष्ट्र जलवायु शिखर सम्मेलन 2015 में पेरिस में फ्रांस के साथ साझेदारी में अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन शुरू किया। सौर गठबंधन का लक्ष्य देशों, विशेष रूप से विकासशील देशों को एकजुट करना है, ताकि सौर ऊर्जा की अदोहित क्षमता का दोहन किया जा सके और सस्ती दरों पर सार्वभौमिक ऊर्जा पहुंच प्रदान की जा सके। अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन संधि-आधारित अंतर सरकारी संगठन है, जिसका मुख्यालय भारत में स्थित है।
- भारत स्वच्छ ऊर्जा संबंधी 'मिशन इनोवेशन' में 22 सदस्य देशों और यूरोपीय संघ के साथ भागीदारी कर रहा है, और स्मार्ट ग्रिड, ऑफ-ग्रिड और टिकाऊ जैव ईंधन नवाचार चुनौतियों में सह-नेतृत्व प्रदान कर रहा है।

आगे क्या?

वैज्ञानिक और जमीनी साक्ष्य इसमें कोई संदेह नहीं छोड़ते हैं कि जलवायु परिवर्तन के प्रभाव भविष्य में दूर नहीं हैं, बल्कि पहले से ही महसूस किए जा रहे हैं। यह अनुभव किया जा रहा है कि क्या ये चरम मौसम की घटनाएं हैं या वर्षा के बदलते पैटर्न केवल शुरुआत मात्र है। अब के बाद केवल प्रभाव की तीव्रता, आवधिकता में वृद्धि होगी, और प्रभावित होने वालों की संख्या बढ़ जाएगी। यह स्पष्ट है कि सभी सरकारों और हितधारकों के सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद, पेरिस समझौते के तहत किए गए वादों को पूरा करने के लिए, दुनिया को तापमान वृद्धि में कमी का एक निश्चित स्तर तय करना होगा और उसे हासिल करना होगा।

आईपीसीसी की विशेष रिपोर्ट दुनिया को बढ़ते तापमान को एक ऐसे स्तर तक कम करने के लिए लगभग 12 साल का समय देती है, जहां इस ग्रह का तापमान बढ़ने से होने वाले नुकसान को सीमित किया जा सके। आईपीसीसी की अक्टूबर की रिपोर्ट के बाद से, अन्य वैज्ञानिक पैनल, जैसे संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण के छठे वैश्विक पर्यावरण आउटलुक ने भी प्रतिकूल प्रभाव के बारे में चेतावनी दी है कि पर्यावरण को नुकसान का असर स्वास्थ्य और समृद्धि पर पड़ रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जलवायु परिवर्तन की समस्या वास्तविक है और इसका प्रभाव पहले के अनुमानों से कहीं अधिक दूरगामी है।

संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरेस

की चेतावनी विशेष रूप से भारत जैसे सीमित संसाधनों वाली बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के लिए सही है। बढ़ते तापमान की समस्या खाद्य असुरक्षा, उच्च खाद्य कीमतों, आय में कमी, खोए हुए आजीविका के अवसरों, प्रतिकूल स्वास्थ्य प्रभावों और जनसंख्या विस्थापन के माध्यम से वंचित और कमजोर आबादी को प्रभावित करेगी।

जलवायु परिवर्तन भारत जैसी उभरती अर्थव्यवस्था के लिए एक जटिल चुनौती है। महत्पूर्ण विकास घाटे के साथ एक बड़ी विकासशील अर्थव्यवस्था, जिसमें लाखों लोग गरीबी में रहने वाले हों, अपनी अर्थव्यवस्था को कैसे आगे बढ़ाते हैं और अपने कार्बन फुटप्रिंट को सीमित करते हुए विकास को बनाए रखते हैं ताकि अपने लोगों पर जलवायु परिवर्तन के अधिक गंभीर प्रभावों से बचने के लिए तापमान बढ़ने की गति को धीमा कर सकें? सीमित संसाधनों के साथ एक विकासशील देश यह कैसे सुनिश्चित करता है कि वह जलवायु के दबावों वाली दुनिया में अपने लोगों की खुशहाली को खतरे में डाले बिना कैसे उनके विकास का अंतराल दूर कर सकता है और साथ ही भविष्य के अवसरों का लाभ उठाने में सक्षम है?

भौतिक संसाधन और ऊर्जा आर्थिक प्रगति के संचालक हैं। अर्थव्यवस्था में वृद्धि और विकास की खाई को पाटने के लिए अनिवार्य रूप से भारत के भौतिक संसाधनों और ऊर्जा की खपत में वृद्धि की आवश्यकता होगी। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण-प्रायोजित विज्ञान

भारत के लिए भी यह उतना ही महत्त्वपूर्ण है कि वह उन बदलावों का सामना करने के लिए अपनी क्षमता का निर्माण करे, जो पृथ्वी के बढ़ते तापमान से उत्पन्न हुए हैं और अपनी समुत्थानशीलता से जलवायु परिवर्तन की चुनौती को अवसरों में परिवर्तित करने की क्षमता प्रदर्शित करे।

संस्था, इंटरनेशनल रिसोर्स पैनल, ग्लोबल रिसोर्स आउटलुक 2019 के एक हालिया आकलन में बताया गया है कि सामग्री संसाधनों-बायोमास, जीवाश्म ईंधन, धातु और गैर-धातु खनिजों का वैश्विक निष्कर्षण और प्रसंस्करण ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में 50 प्रतिशत से अधिक योगदान देता है। निम्न-मध्यम आय वाले देश के रूप में, भारत के पदार्थ फुटप्रिंट का आकार उसके उच्च और उच्च-मध्य आय समकक्षों से छोटा है। हालांकि, यह पहले से ही एक भौतिकवादी विकास मॉडल के प्रतिकूल प्रभावों का सामना कर रहा है, जिनमें प्रदूषित हवा, पानी के तनाव और जलवायु परिवर्तन से प्रभावित मौसमी घटनाएं शामिल हैं। स्पष्ट है कि, जिस तरह से भारत तीव्र गति से शहरीकरण को आगे बढ़ा रहा है, अपने अभी तक अनिर्मित लगभग 70 प्रतिशत आधारभूत ढांचे का निर्माण कर रहा है, अपने विनिर्माण आधार को बढ़ा रहा है, गैर-कृषि और खनन क्षेत्रों में रोज़गार पैदा कर रहा है, अतः उसे उत्पादन और उपभोग प्रणालियों में ऐसे बदलाव लाने की आवश्यकता होगी, जो टिकाऊ हों, जिनसे कम अपशिष्ट का उत्सर्जन हो और जिनमें संसाधनों तथा उत्पादों का न केवल अधिक कुशलता से उपयोग हो, बल्कि उनका पुनः उपयोग, पुनः उत्पादन, पुनर्नवीनीकरण या पुनः प्राप्त किया जा सके। यह स्पष्ट है कि भारत उन विकास मॉडलों को अपनाने का जोखिम नहीं उठा सकता, जिन्होंने विकसित औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं और चीन जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था को नया आधार प्रदान किया है।

भारत को अपने लोगों के विकास की खाई को पाटने और निरंतर आर्थिक विकास सुनिश्चित करने के लिए, अंतर्राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन और सतत विकास की अपनी प्रतिबद्धताओं के दायरे से आगे बढ़ना होगा। इसके लिए कोयला बिजली संयंत्रों के स्थान पर सौर पैनलों और पवन टरबाइनों की स्थापना और जीवाश्म ईंधन से चलने वाले वाहनों के स्थान पर इलेक्ट्रिक वाहनों के इस्तेमाल से भी अधिक कुछ करना होगा। उत्सर्जन की वृद्धि की दर को धीमा करना महत्वपूर्ण है। भारत के लिए भी यह उतना ही महत्त्वपूर्ण है कि वह उन बदलावों का सामना करने के लिए अपनी क्षमता का निर्माण करे, जो पृथ्वी के बढ़ते तापमान से उत्पन्न हुए

हैं और अपनी समुत्थानशीलता से जलवायु परिवर्तन की चुनौती को अवसरों में परिवर्तित करने की क्षमता प्रदर्शित करे।

जलवायु परिवर्तन के लिए अर्थव्यवस्था में व्यापक परिवर्तन लाने की आवश्यकता होगी। भारत को पूरे स्पेक्ट्रम-ऊर्जा, परिवहन, शहरी और कृषि प्रणालियों में नाटकीय परिवर्तन करने की आवश्यकता होगी। भारत को मानव पूंजी, नवाचार और अनुसंधान एवं विकास में निवेश की आवश्यकता होगी। ऊर्जा मिश्रण परिवर्तनों को देखते हुए भारत को ऐसे 500,000 लोगों को फिर से कौशल प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए निवेश करना होगा, जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से कोयला खनन पर निर्भर करते हैं। उसे नवाचार में निवेश करना होगा, जो अर्थव्यवस्था के जलवायु-प्रेरित परिवर्तन की सामाजिक लागत को कम करते हैं।

उत्पादन और उपभोग प्रणालियों की सामग्री एवं कार्बन फुटप्रिंट और ऊर्जा दक्षता की लागत को कम करने के लिए उच्च स्तरीय अनुसंधान और विकास की आवश्यकता होगी। सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा क्षमताओं की उत्पादकता और सक्षमता में सुधार लाना ताकि जीवाश्म ईंधन को चरणबद्ध से हटाया जा सके, पानी का संकट कम करने के लिए खेती और फसल प्रणालियों को बदलने के लिए सहायता प्रणाली विकसित करना, तापमान और वर्षा पैटर्न में बदलाव को देखते उत्पादकता में सुधार करना, आदि ऐसे मुद्दे हैं, जिन पर अमल करना होगा। भारत को भविष्य के उद्योगों के निर्माण के लिए अपने निवेश निर्णयों पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता होगी। उसे वर्तमान की जरूरतों, लोगों की भौतिक आकांक्षाओं और भविष्य के अवसरों के बीच संतुलन स्थापित करना होगा।

जलवायु परिवर्तन के अंतर्गत बढ़ता तापमान, वर्षा होने की प्रक्रिया में परिवर्तन और विषम मौसम घटनाएं शामिल हैं। इसमें और भी बहुत कुछ शामिल है। यह हमारे उपभोग और उत्पादन के तरीके को बदलने से संबद्ध है। इसका संबंध अधिक स्थायी अर्थव्यवस्था बनाने के साथ है। भारत जैसे देश के लिए, एक जलवायु संकटग्रस्त दुनिया में विकास के बैकलॉग को भरना एक वास्तविक और तात्कालिक चुनौती है। हालांकि हम अभी इस संकट से बाहर नहीं निकल सकते। आगे का रास्ता सम्पदा अर्जित करने पर केंद्रित होना चाहिए, जिससे एक समुत्थानशीलता पैदा हो जो पृथ्वी का तापमान बढ़ने से उत्पन्न वास्तविक और भौतिक चुनौतियों से निपटने और आर्थिक विकास को बनाए रखने में सहायक हो ताकि सभी लोगों के लिए बेहतर जीवन सुनिश्चित किया जा सके। भारत के लिए यह मार्ग क्षमता पैदा करने वाला होना चाहिए ताकि वह जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न संकटों को अवसरों बदल सके। ❑

संदर्भ

1. केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण, फरवरी 2019, पावर स्टेशनों की अखिल भारतीय संस्थापित क्षमता।
2. केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण, 2018बी, नेशनल इलेक्ट्रिसिटी प्लान (वोल्यूम I) : जेनरेशन।
3. इंस्टीटट्यूट फॉर एनर्जी इकोनॉमिक्स एंड फाइनेंशियल एनालिसिस, इंडिया ऑन ट्रैक टू मीट मैजोरिटी ऑफ पेरिस गोल्स।
4. उर्मि ए. गोस्वामी, 2018, इंडिया टू अचीव क्लाइमेट गोल्स बिफोर सेड्यूल, द इकोनॉमिक टाइम्स (https://:conomictimes.indiatimes.com/news/politics-and-nation/india-setto-increase-share-of-renewablesand-reduce-carbo-dioxide-pollution/articleshow/66924213.cms)

Indiastat KEY ECONOMIC INDICATORS OF INDIA

Indiastat PRESENTS

Mobile App

Key Economic Indicators of India

The Key Economic Indicators of India app assists one to track the newest economic information of India with an unrivalled range of economic sectors which are being updated on a weekly basis. This app, which is supported in 19 languages, is a one-stop-app for the economists, financial market professionals, academics, marketers and every single person who always hanker after the up-to-date economic data of India.

Available in 12 Indian and 7 International languages

Updated weekly

With Comparative data

AVAILABLE ON

DATANET INDIA INITIATIVES

Indiastat.com | DistrictsofIndia.com | ElectionsinIndia.com | Indiastatgraphics.com | DatanetIndia-eBooks.com

18 years of serving socio-economic & electoral research fraternity in India and abroad

YH-1066/2/2018

पुस्तक चर्चा

एशियाटिक लॉयन-रिवाइविंग द प्राइड ऑफ गीर

लेखक : एच. एस. सिंह

आईएसबीएन- 978-81-230-2985-6

पीडीबीएन- एफएंडएफ-इंग-ओपी-149-2018-19

कीमत- 1250/- रुपये

प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

शेर दुनिया भर में 'जंगल के राजा' के तौर पर मशहूर है। लिहाजा, यह हमेशा अलग-अलग तरीके से मानवीय कल्पना और दिलचस्पी के दायरे में प्रमुखता से रहा है। 'एशियाटिक लॉयन-रिवाइविंग द प्राइड ऑफ गीर (एशियाई शेर- गीर के गौरव को पुनर्जीवित करने की कहानी)' नामक किताब दुर्लभ नज़रिये के साथ इस जीव के बारे में जानकारी, एशियाई शेयरों के ऐतिहासिक रिकॉर्ड, विकास, उत्पत्ति और लुप्त होने से इसके बचने के बारे में विस्तार से बताती है। गीर देश का एक मशहूर अभयारण्य और एशियाई शेरों का एकमात्र प्राकृतिक ठिकाना है। यह सूचनाप्रद और रोचक किताब वन विभाग के पूर्व प्रमुख संरक्षक डॉ. एच. एस. सिंह के जिंदगी भर के अध्ययन और अनुभव का परिणाम है, लिहाजा किताब में पेश की गई जानकारी को ऐसे अंदाज में प्रस्तुत किया गया है, जिसका लंबे वक्त से इंतजार था। लेखक ने अपने निजी संग्रह से दिलचस्प जानकारी और तस्वीरें साझा की हैं और इस तरह से यह किताब पाठकों के लिए सूचनाप्रद और ज्ञानवर्द्धक यात्रा है। यह किताब एक बहुमूल्य दस्तावेज़ है, जिसमें शेरों के जीवन चक्र के विभिन्न पहलुओं को समाहित किया गया है, मसलन सामाजिक व्यवहार, प्रजनन संबंधी जानकारी, शारीरिक लक्षण, आदतें और ठिकाना, शिकार की प्रवृत्ति, खाने का तरीका आदि। इसके साथ गीर का पारिस्थितिकी तंत्र और इसमें रहने वाले अन्य जानवरों मसलन चौसिंघा (दुर्लभ चार सींघों वाला हिरण), सांभर हिरण, खास तरह का मगरमच्छ, भारतीय लोमड़ी आदि शामिल हैं। किताब में गीर जंगलों के संरक्षण से जुड़े कई पहलुओं की चर्चा की गई है, जिसके तहत वन अधिकारियों द्वारा की गई कड़ी मेहनत और उनकी करुणा का जिक्र भी शामिल है। गीर वन में पिछले 5 दशक में किए गए संरक्षण संबंधी प्रयासों और एशियाई शेरों के लिए किए गए कार्यों के कारण यह दुनिया के बेहतरीन अभयारण्यों में से एक है। हालांकि, जैसा कि किताब में बताया गया है, नई सहस्राब्दि में इस शाही जानवर का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि इंसान किस तरह से इससे बर्ताव करते हैं और इसे कितनी अहमियत देते हैं।

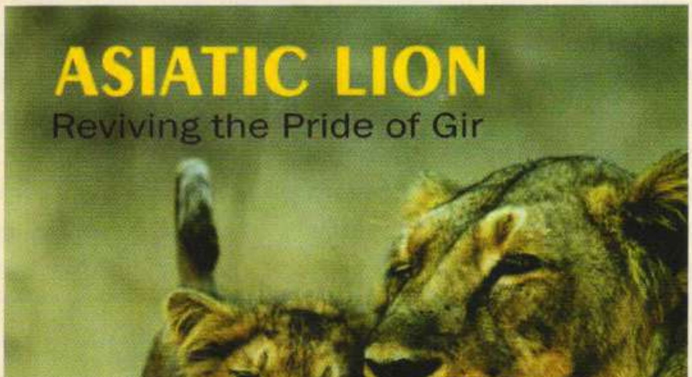

सूचना और प्रसारण मंत्रालय के प्रकाशन विभाग ने इस किताब को छापा है। यह पुस्तक गैलरी, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, नई दिल्ली पर उपलब्ध है।

अपनी प्रति बुक करने के लिए इस पते पर- businesswng@gmail.com ईमेल भी कर सकते हैं। ❑

प्रकाशन विभाग द्वारा जलियांवाला बाग नरसंहार के शताब्दी वर्ष का आयोजन

प्रकाशन विभाग ने इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र (आई.जी.एन.सी.ए.) के सहयोग से नई दिल्ली में 15 अप्रैल, 2019 को जलियांवाला बाग नरसंहार के एक सौ साल पूरे होने के सिलसिले में "याद करो कुर्बानी" नाम के विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया। इस अवसर पर उपस्थित गणमान्य लोगों में जाने-माने लेखक और आधुनिक भारतीय इतिहास के विशेषज्ञ प्रो. चमन लाल, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी, प्रकाशन विभाग की महानिदेशक और अपर महानिदेशक शामिल थीं।

इस अवसर पर प्रो. चमन लाल ने नरसंहार की क्रूरता और इसके बाद शुरू हुई घटनाओं का सिलसिलेवार जिक्र करते हुए कहा कि इसने देशवासियों को संघर्ष के लिए एकजुट कर दिया। डॉ. सच्चिदानंद जोशी ने युवाओं से आग्रह किया कि वे स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के जीवन से प्रेरणा लें और राष्ट्र की प्रगति के लिए कड़ी मेहनत करें। दिल्ली के तीन स्कूलों के विद्यार्थियों ने इस अवसर पर तीन रुचिपूर्ण कार्यक्रम प्रस्तुत किये। केन्द्रीय विद्यालय, प्रगति विहार के विद्यार्थियों ने एक नाटिका प्रस्तुत की और प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'याद कर लेना कभी : शहीदों के खत' से अमर शहीद भगत सिंह, चंद्रशेखर आज़ाद, सुभाष चंद्र बोस सहित कई स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के पत्रों को पढ़ कर सुनाया। यह पुस्तक कई भारतीय भाषाओं जैसे, मलयालम, तमिल, ओडिया और उर्दू में छपी है। इस मौके पर अनूदित पुस्तकों का लोकार्पण भी किया गया।

केन्द्रीय विद्यालय, राष्ट्रपति संपदा और जवाहर बाल भवन, मांडी के विद्यार्थियों ने प्रकाशन विभाग की पुस्तक 'ज़ब्तशुदा तराने' से कविताओं का पाठ किया। इस पुस्तक में शहीदों और स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों की ऐसी कविताएं संकलित हैं जिन्हें उस समय की औपनिवेशिक सरकार ने ज़ब्त कर लिया था। शहीदों को याद करने का सिलसिला जारी रखते हुए प्रकाशन विभाग और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र ने 16 अप्रैल, 2019 को आई.जी.एन.सी.ए. ऑडीटोरियम में जाने-माने लेखक प्रो. चमन लाल और सुश्री किश्वर देसाई द्वारा पुस्तक पाठ के सत्र का आयोजन किया। उन्होंने प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित प्रो. चमन लाल की पुस्तक 'शहीद भगत सिंह : दस्तावेज़ों के आईने में' के कुछ अंशों को पढ़ कर सुनाया। ❑